अभिनव कृषि

वर्ष-7 अंक-4 दिसम्बर, 2025 रजि. नं. : RAJHIN/2021/81869

विशेषांक

सिंचाई प्रबंधन, मृदा स्वस्थ प्रबन्धन, जैविक खेती, आधुनिक डेयरी, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन

प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)-324001

FMC | An Agricultural Sciences Company

अम्ब्रिवा™ का वार
गुल्ली डंडे की पक्की हार !

प्रतिरोधी और अड़ियल गुल्ली डंडे का दीर्घकालिक समाधान

powered by ISOFLEX® active

FMC, the FMC logo, Ambriva, Isoflex, अम्ब्रिवा and आइसोफ्लेक्स are trademarks of FMC Corporation and/or an affiliate. ©2025 FMC Corporation. All rights reserved.

अभिनव कृषि

वर्ष-7 अंक-4 दिसम्बर, 2025 रजि. नं. : RAJHIN/2021/81869

संरक्षक

डॉ. विमला डूंकवाल
माननीय कुलगुरू, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

सम्पादक मण्डल

डॉ. महेन्द्र सिंह
निदेशक प्रसार शिक्षा
प्रधान संपादक एवं प्रकाशक

डॉ. के.एम. शर्मा
सह निदेशक, प्रसार शिक्षा
संपादक

डॉ. योगेन्द्र कुमार मीणा
विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान विज्ञान)
संपादक एवं समन्वयक

डॉ. घनश्याम मीना
आचार्य (पशु विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. राकेश कुमार बैरवा
आचार्य (शस्य विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. एच.पी. मेघवाल
सह–आचार्य (कीट विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. सेवाराम रूण्डला
विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. गुंजन सनाढ्य
विषय वस्तु विशेषज्ञ (गृह विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. रूप सिंह
सहा. आचार्य (पादप रोग विज्ञान)
सह–संपादक

सुश्री सरिता
तकनीकी सहायक
सह–संपादक

मनोनीत सलाहकार मण्डल

डॉ. एम.सी. जैन
निदेशक, अनुसंधान

डॉ. मुकेश चन्द गोयल
निदेशक, पी.एम.एण्ड ई.

डॉ. डी.के. सिंह
निदेशक, मानव संसाधन विकास

डॉ. आई.बी. मौर्य
अधिष्ठाता, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

डॉ. एस.के. जैन
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, कोटा

डॉ. एन.एल. मीणा
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, हिण्डौली, बून्दी

सदस्यता शुल्क

- ☞ त्रैमासिक (प्रति अंक) 50 रू.
- ☞ वार्षिक (चार अंक) 200 रू
- ☞ आजीवन (15 वर्ष)1500 रू.

विज्ञापन दरें

(i)	अन्तिम सम्पूर्ण (रंगीन)	रू. 10,000/-
(ii)	प्रथम या अन्तिम पृष्ठ के पीछे (रंगीन)	रू. 7,000/-
(iii)	अन्तिम आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 6,000/-
(iv)	प्रथम या अन्तिम पृष्ठ के पीछे आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 4,000/-
(v)	अन्दर का सम्पूर्ण पृष्ठ (रंगीन)	रू. 5,000/-
(vi)	अन्दर का आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 3000/-
(vii)	अन्दर का सम्पूर्ण पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 5,000/-
(viii)	अन्दर का आधा पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 2,500/-

नोट : यदि विज्ञापन वर्ष के सभी चार अंकों के लिए दिया जाता है तो उपरोक्त दरों में 25 प्रतिशत की कमी की जायेगी।

सदस्यता एवं नवीनीकरण हेतु

खाता धारक : DEE, Agriculture University, Kota
बैंक : ICICI BANK, Nayapura, Kota
खाता संख्या : 687801700345
IFSC : ICIC0006878

लेख एवं सुझाव भेजने का पता

"अभिनव कृषि"
प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
बोरखेड़ा, बारां रोड़ कोटा (राजस्थान) – 324001
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com दूरभाष : 0744- 2326727

प्रकाशक: प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
मुद्रक : डामयण्ड प्रिन्टर्स, नई धानमण्डी, कोटा (राज.) मो. 9414231079

नोट– "अभिनव कृषि" में आलेख प्रकाशन हेतु लेखकों का सदस्य होना अनिवार्य है तथा लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है। इस पत्रिका में दिये गये विज्ञापनों के उत्पादों आदि की कृषि विश्वविद्यालय, कोटा किसी प्रकार की अनुशंसा नही करता है।

डॉ. महेन्द्र सिंह
निदेशक प्रसार शिक्षा

Directorate of Extension Education
प्रसार शिक्षा निदेशालय
AGRICULTURE UNIVERSITY, KOTA
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Borkhera, Baran Road, Kota 324 001 (Raj.)
बोरखेडा, बारां रोड, कोटा 324001 (राज.)

प्रधान संपादक की कलम से.....

भारतीय कृषि वर्तमान समय में परिवर्तन के एक निर्णायक दौर से गुजर रही है। कृषि क्षेत्र में हो रहे नवाचारों एवं तकनीकी प्रगति ने किसानों की जीवन–दशा और कार्य–दिशा दोनों को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया है। डिजिटल एवं स्मार्ट कृषि पद्धतियों के बढ़ते उपयोग से न केवल उत्पादन प्रणाली सुदृढ़ हुई है, बल्कि कृषि के प्रति युवाओं की रुचि में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। कृषि के व्यवसायिक स्वरूप के विस्तार से इस क्षेत्र में रोजगार एवं स्वरोजगार की नई संभावनाएँ सृजित हो रही हैं।

डिजिटल एवं स्मार्ट कृषि, उत्पादन से जुड़े विभिन्न घटकों जैसे बीज, मृदा, जल, पोषण, कीट–रोग प्रबंधन एवं विपणन को एकीकृत दृष्टिकोण प्रदान कर रही है। इस दिशा में प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा द्वारा फसल उत्पादन, पशुपालन तथा कृषि से संबद्ध अन्य क्षेत्रों की उन्नत एवं व्यावहारिक तकनीकों को कृषक समुदाय तक प्रभावी रूप से पहुँचाने के सतत प्रयास किए जा रहे हैं, जिससे किसानों की आय में वृद्धि सुनिश्चित की जा सके।

अभिनव कृषि पत्रिका किसानों के लिए उपयोगी तकनीकी जानकारी को सरल, स्पष्ट एवं व्यवहारिक भाषा में प्रस्तुत करने का एक सशक्त माध्यम है, जिससे किसान वैज्ञानिक अनुशंसाओं को अपनाकर उत्पादन बढ़ाने एवं आय संवर्धन की दिशा में अग्रसर हो सकें।

पत्रिका के इस अंक में प्राकृतिक एवं जीरो बजट खेती, रबी फसलों में सूक्ष्म पोषक तत्व प्रबंधन, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, पशुपालन, औषधीय एवं सुगंधित पौधों की खेती, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, कृषि प्रसंस्करण तथा खरपतवार प्रबंधन जैसे समसामयिक एवं उपयोगी विषयों को सम्मिलित किया गया है, जो कृषकों एवं अन्य हितधारकों के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध होंगे।

मैं इस पत्रिका के संपादक मंडल को उत्कृष्ट संकलन एवं गुणवत्तापूर्ण संपादन के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ तथा उनके सतत प्रयासों के लिए शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

(महेन्द्र सिंह)

अभिनव कृषि

वर्ष-7 अंक-4 दिसम्बर, 2025

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	रबी की प्रमुख फसलों में जल का समुचित उपयोग आर. एस. नारोलिया, राजेन्द्र कुमार यादव, आर. के. बैरवा एवं किरण मीणा	1–3
2.	चावल–गेहूँ फसल प्रणाली में मृदा स्वास्थ्य और फसल उत्पादकता में सुधार के लिए फसल अवशेषों का पुनर्चक्रण चेतराम मीना, भवानी शंकर मीना, पूजा विशनोई, एंव आशीष मीना	4–5
3.	फसल उत्पादन में सूक्ष्म पोषक तत्वों का महत्व राजेंद्र कुमार यादव, विनोद कुमार यादव, मनोज कुमार शर्मा एवं राकेश कुमार यादव	6–8
4.	जीरो बजट प्राकृतिक खेती तनवीर कौर, हरीश वर्मा, नीरज हाड़ा एवं सेवाराम रुण्डला	9–10
5.	वर्मीबेड से केंचुआ खाद व केंचुए को अलग करने की आसान विधियाँ श्रवण कुमार यादव, शांति कुमार शर्मा, भवानी शंकर मीणा एवं सत्यनारायण मीणा	11
6.	खरपतवार प्रबंधन में आधुनिक तकनीकें ए आई एवं नवाचार मोहन लाल जाट, भागचन्द धायल, सत्यनारायण मीणा एवं राजेश शर्मा	12–14
7.	शहद से समृद्धि तक : किसानों के लिए मधुमक्खी पालन एक सुनहरा अवसर कैलाश चन्द्र अहीर एवं राजेन्द्र गोचर	15–17
8.	मधुमक्खी वेक्टरिंग : आधुनिक जैविक कृषि की क्रांतिकारी तकनीक एच.पी.मेघवाल, बी.एल.ढाका, योगेन्द्र कुमार मीणा एवं शेफाली सोनी	18–19
9.	कम लागत में अधिक लाभः सफेद बटन मशरूम की आधुनिक और सरल उत्पादन तकनीक दमा राम, डी एल यादव एवं सी बी मीणा	20–21
10.	डेयरी प्रोसेसिंग में स्टार्टअप के मौकेः राजस्थान के किसानों के लिए खुशहाली का नया रास्ता माया शर्मा, रश्मि भिंडा एवं प्रशांत साहनी	22–23
11.	पशु सुधार में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का योगदान अनिता कुमारी मीणा	24
12.	औषधीय पौधों से सजाऐं घर की बगीया शशि कुमार बैरवा, हरीश वर्मा एवं इन्दिरा यादव	25–26
13.	कृषि में फ्लाई ऐश का उपयोग : मिट्टी सुधार की एक सस्ती और असरदार तकनीक सोनल शर्मा, मनोज कुमार शर्मा एवं श्रवण कुमार यादव	27
14.	आँवला प्रसंस्करण तकनीक उद्यमिता विकास गुंजन सनाढ्य, मुमल भारद्वाज एवं योगेन्द्र कुमार मीणा	28–30
15.	छतों पर बागवानी : शहरी पारिस्थितिकी तंत्र में योगदान मयंक शर्मा, कुलदीप हरियाणा एवं कुलदीप सिंह राजावत	31–32
16.	फूल उद्योग के लिए पुष्प रंजन नई तकनीक आशुतोष मिश्रा एवं सुनीता कुमारी	33

रबी की प्रमुख फसलों में जल का समुचित उपयोग

आर. एस. नारोलिया, राजेन्द्र कुमार यादव, आर. के. बैरवा एवं किरण मीणा
कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा एंव कृषि महाविघालय, कोटा

पौधे पानी की आवश्यकता की पूर्ति भूमि में एकत्रित नमी के माध्यम से करते है। फसल की बढ़वार के लिए भूमि में हमेशा जल एवं हवा की उचित मात्रा बनी रहनी चाहिए। खेत में नमी कम होने पर इसकी पूर्ति सिंचाई द्वारा की जाती है। जड़ क्षेत्र में नमी कम होने पर पौधे मुरझाने के चिन्ह् दिखना शुरू होने से पूर्व ही काफी नुकशान हो चुका होता है।

कृषि की आवश्यकता के साथ–साथ बढ़ती आबादी एवं भौतिक आवश्यकताओं के कारण जल की मांग में निरंतर वृद्धि हो रही है तथा उपलब्धता सीमित है। इसलिए जल की प्रत्येक बूंद का अनुकूलतम उपयोग करना आवश्यक है। इस हेतु हमें फसल पद्धति में आवश्यक परिवर्तन कर सिंचाई नालियों, नहरों से होने वाले पानी के अपव्यय को कम करना चाहिए एवं सिंचाई की नई विधियों को अपनाकर सीमित जल से अधिक क्षेत्र में सिंचाई कर, अधिक उत्पादन प्राप्त करना चाहिए।

फसल में सिंचाई करते समय फसल अवस्था, भूमि में नमी की मात्रा, भूमि से नमी के वाष्पीकरण की स्थिति एवं पौधों में जल की मात्रा को ध्यान में रखना चाहिए। फसल की बढ़वार के अनुसार जल आवश्यकता बदलती रहती है। सीमित पानी उपलब्ध होने पर फसल की क्रान्तिक अवस्थाओं पर सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाई द्वारा दिया हुआ पानी पौधें के ऊत्तक निर्माण व वाष्पोत्सर्जन में काम आता है एवं भूमि में रिसाव वाष्पीकरण के रूप में खर्च होता है। वाष्पीकरण एवं उत्सर्जन द्वारा पानी का उड़ना वातावरण के तापमान, सूर्य के प्रकाश की तीव्रता, वातावरण में आद्रता, हवा का बहाव, वर्षा एवं भूजल की स्थिति पर निर्भर करता है। जब तक पौधें को जल उपलब्ध होता है तब तक पौधों की बढ़वार होती रहती है अन्यथा पौधों की वृद्धि रूक जाती है तथा अंत में पौधे मर जाते है।

पौधों की कुछ अवस्थाओं पर पानी की कमी होने पर उपज में तुलनात्मक रूप से अधिक कमी हो जाती है। पौधों की अवस्थाओं को क्रान्तिक अवस्था कहते है। इन अवस्थाओं पर तापमान, आद्रता, भूमि में नमी की उपस्थिति का भी प्रभाव पड़ता है। इन क्रान्तिक अवस्थाओं पर भूमि में नमी का उचित स्तर बनाए रखना चाहिए।

भूमि में पर्याप्त नमी की जानकारी हेतु मिट्टी को मुट्ठी में बन्द कर गोला बनाऐं तथा गोले को थोड़ा ऊपर उछालकर हाथ में झेलें। यदि गोला टूट जाता है तो नमी कम है और यदि गोला बिना टूटे उसी आकार में रहता है तो पर्याप्त नमी का द्योतक है। सिंचित फसलों में सूर्यमुखी के पौधे लगाने से नमी की स्थिति का पता लग सकता है, क्योंकि सूर्यमुखी की नई पत्तियाँ मुरझाने का मतलब भूमि में नमी कम होना।

नहरी क्षेत्रों में सिंचाइ की उपयुक्त विधिया : ज्यादातर कृषक फसलों में परम्परागत तरीके से खेतों में सीधे ही पानी देते है जिससे पानी का असमान वितरण होता है, साथ ही पानी की अधिक आवश्यकता होती है और सिंचाई में समय भी ज्यादा लगता है व कई बार लवणीयता की भी समस्या हो जाती है। सिंचाई विधियों का चयन मुख्यतया जल की उपलब्धता, मिट्टी के प्रकार, फसल आदि कारणों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

पर्याप्त पानी उपलब्धता की स्थिति में : बॉर्डर या मेड़, पट्टी, कूंड विधि से सिंचाई करें। नहरी तंत्र में 5–8 मीटर चौडी ओर ढलान के अनुसार लम्बाई की क्यारियाँ बनाकर सिंचाई करें तथा क्यारी 80 प्रतिशत पानी से भर जाये तब हमें क्यारी में पानी को रोक देना चाहिए शेष 20 प्रतिशत भाग स्वतः ही भर जायेगा। ऐसा करने से पानी की बचत भी होगी और क्यारी के अंत में ज्यादा पानी भरने की संभावना भी कम हो जायेगी। इस प्रकार हम प्रत्येक क्यारी से 20 प्रतिशत पानी बचा कर इस पानी को टेल तक पहुँचा सकते हैं अन्यथा यह पानी व्यर्थ ही बहकर या तो ड्रेन में चला जायेगा या क्यारी में ज्यादा पानी होने पर फसल पीली पड जायेगी। अक्सर देखा जाता है कि नहरी तंत्र में टेल तक पानी या तो पहुँचता ही नही या फिर बहुत कम पहुचता है, जिससे किसान सही समय पर फसल को पानी नहीं दे पाता और उसको आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है।

बॉर्डर सिचाई प्रणाली

जल भराव प्रणाली

अपर्याप्त पानी होने पर : फब्बारा, बूंद–बूंद सिंचाई काम में लेवें जिससे कम पानी से अधिकतम उत्पादन लिया जा सके।

फव्वारा (स्प्रिंक्लर) सिंचाई पद्धति: स्प्रिंकलर सिंचाई पद्धति बरसात की बौछार का एहसास देने वाली सिंचाई पद्धति है इस पद्धति में पानी को दाब के साथ पाइप के जाल नेटवर्क द्वारा विकसित कर स्प्रिंकलर के नोजल तक पहुंचाया जाता है जहां से यह एक समान वर्षा की बौछार के रूप में जमीन पर फैलता है। इस विधि से सिंचाई करने पर मृदा में नमी का उपयुक्त स्तर बना रहता है जिसके कारण फसल की वृद्धि, उपज और गुणवत्ता अच्छी रहती है तथा सिंचाई के पानी में घुलनशील उर्वरक, कीटनाशी तथा जीवनाशी या खरपतवारनाशी दवाओं का भी प्रयोग आसानी से किया जा सकता है। पानी की कमी, सीमित पानी की उपलब्धता वाले क्षेत्रों में दोगुने से तीन गुना क्षेत्रफल की सिंचाई की जा सकती है।

फव्वारा सिंचाई विधि के लाभ

- सतही सिंचाई विधियों की तुलना में लगभग 30 से 40 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत।

- संरक्षित सिंचाई जल से 30 से 40 प्रतिशत अतिरिक्त क्षैत्र में सिंचाई ।
- क्यारी धौरे बनाने में होने वाले श्रम की बचत ।
- फसल उत्पादन के लिये अधिक क्षेत्र की उपलब्धता ।
- ऊँचे–नीचे रेतीले भू–भाग में आसानी से सिंचाई संभव तथा भूमि को समतल करने में होने वाले श्रम एवं व्यय की बचत ।
- फसल उत्पादन तथा फसल सघनता में वृद्धि तथा उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार ।
- अत्यधिक गर्मी तथा पाने से फसलों का बचाव ।
- भू–संरक्षण एवं बालू की टीले स्थिरीकरण में सहायक ।

फब्बारा सिचाई प्रणाली

बूंद–बूंद सिचाई पद्वति : बूंद– बूंद सिचाई पद्वति एक प्रकार की आधुनिक पद्धति है जिसमें पानी के मुख्य स्त्रोत से पौधों की जड़ों तक कुछ विभिन्न प्रकार, आकार एवं क्षमता वाले प्लास्टिक के पाइपों की सहायता से पूरे खेत/बाग में जाली बिछाकर तथा कुछ अन्य उपकरण जैसे ड्रिपर/इमिटर, स्क्रीन, रेत छन्नक मुख्य पाइप, निकास वाल्व, वेन्चुरी आदि को लगाकर पानी उपलब्ध कराया जाता है ।

बूंद– बूंद सिचाई पद्वति द्वारा पानी एवं घुलनशील उर्वरक पौधों की जड़ों में पहुँचाया जाता है ताकि पानी का रिसाव तथा वाष्पीकरण न्यूनतम हो और पानी की बचत हो सके। बूंद– बूंद सिचाई पद्वति में परम्परागत सिंचाई विधियों की तुलना में 50 से 70 प्रतिशत तक जल की बचत की जा सकती है। सिचाई की यह विधि विभिन्न प्रकार की मिट्टी, ऊँची–नीची जमीन, पहाड़ी क्षेत्रों इत्यादि में आसानी से प्रयोग की जा सकती है। सिचाई की यह पद्वति गन्ना, कपास, सब्जियों एवं फलों के लिए उपयुक्त पाई गई है । विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि बूंद– बूंद सिचाई पद्वति द्वारा परम्परागत विधियों की तुलना में 30–40 प्रतिशत अधिक उत्पादन लिया जा सकता है । उत्पादन वृद्धि तथा पानी के बचत के अतिरिक्त बूंद– बूंद सिचाई पद्वति को अपनाकर 60–70 प्रतिशत श्रम की बचत भी की जा सकती है। इस विधि से लवणीय जल को सिंचाई हेतु प्रयोग में लिया जा सकता है। बूंद– बूंद सिचाई पद्वति एक आधुनिक एंव वैज्ञानिक सिंचाई विधि है। अत इसके विभिन्न उपकरण, उनकी रचना एवं रख–रखाव के बारे मे पूर्ण जानकारी होगी, तभी किसान को पुरी तरह या सम्पूर्ण लाभ मिल सकेगा। इसलिए ड्रिप पद्धति जब भी बिछाई जा रही हो, पुरे परिवार को उपस्थित रहकर डीलर अथवा इन्स्टॉलेशन इन्जीनियर से पूरे सेट के संचालन एवं रख–रखाव के बारे में सम्पूर्ण जानकारी हासिल कर लेना चाहिए, जिससे ड्रिप पद्धति से सिंचाई करने व उसे चलाने मे सहुलियत रहेगी। मुख्य पाईप लाइन एंव सहायक पाईप लाइन बिछाने के लिए खड्डे 45–70 सेमी. (18–20 इंच) चौड़े एवं 60 से 75 सेमी. गहरे खोदना चाहिए। खोदी गई नालियां एकदम सीधी होनी चाहिए जिससे पाइप लाइन बिछाने मे सुविधा रहती है। फिल्टर्स (सेण्ड़ फिल्टर एंव स्क्रीन फिल्टर) लगाने हेतु पक्के चबुतरे बनाना हितकर होता है। चबुतरे की साइज फिल्टर्स के आकार पर निर्भर करती है।

बूंद–बूंद सिचाई पद्वति के लाभ

1. पानी की दर एंव मात्रा पर पूरा नियंत्रण रहता है।
2. इस पद्धति में श्रमिकों पर होंने वाले खर्च में काफी कटौती होती है क्योंकि यह सिस्टम एक जगह फिक्स रहता है तथा बार–बार पानी को क्यारियों में नहीं मोडना पडता है।
3. कम मात्रा में जल का प्रवाह होने से अन्य विधियों की तुलना में जल की अधिकतम सुरक्षा होती है। इस विधि से करीबन 12 घंटे पानी देने पर उचित जल पौधौ को मिल जाता है।
4. ऊर्जा की बचत होती हैं। क्योंकि स्प्रिंकलर व अन्य साधनों की अपेक्षा बहुत कम दाब की जरूरत होती हैं।
5. उबड़–खाबड़ भूमियों में भी सिंचाई की जा सकती हैं। इसलिए समतलीकरण पर खर्च होने वाला पैसा भी बच जाता हैं।
6. इस पद्धति से दिया गया पानी सीधे ही जड़ों को मिलता हैं तथा जड़ों के पास जो खारापन होता हैं वह नीचे की तह में चला जाता हैं और पौधें खारेपन के प्रभाव से सुरक्षित रहते हैं।
7. पौधें द्वारा पौषक तत्व लेने की कार्य क्षमता में वृद्धि होती हैं। क्योंकि इस पद्धति द्वारा पौषक तत्वों को सीधा ही जड़ क्षेत्र में पंहुचाया जाता हैं जिन्हे पौधें जरूरत के मुताबिक लेते रहते हैं तथा लीचिंग व खरपतवारों द्वारा हानि नहीं होती हैं।
8. उचित, नियमित एकरूप तथा लगातार पानी पौधों को मिलने के कारण फलों का आकार तथा गुणों में सामान्यतः समरूपता आती हैं जिससें बाजार भाव भी अच्छा मिलता हैं। फलदार वृक्षों में बीमारी, फलों का झड़ना तथा फलों का गिरना आदि में कमी आती हैं।
9. इस पद्धति में जल उपयोग क्षमता 90 से 95 प्रतिशत तक आती हैं। सतही सिंचाई या स्प्रिंकलर सिंचाई की तुलना में वाष्पीकरण तथा सीपेज हानि न के बराबर होती हैं।

बूद–बूंद सिचाई पद्वति

तालिका : 1 रबी फसलों की जल मांग एवं परिस्थितिनुसार सिंचाई प्रबन्धन

फसल	जल मांग (से.मी)	प्रति सिंचाई में जल की मात्रा (से.मी)	पर्याप्त जल उपलब्धता की स्थिति में सिंचाई			सिमित जल स्थितियों में सिंचाई		
			कुल सिंचाईयों की संख्या	फसल की क्रान्तिक अवस्थाऐं	सिंचाई दिनों पर	कुल सिंचाईयां	फसल अवस्था	फसल की स्थिति दिनों पर
गेहूँ	50–60	6–8	4–6	1. शीर्ष जड जमने के समय (ब्ल्) 2. फुटान होते समय 3. तने में गांठे बनते समय 4. वालिया आते समय 5. दाने की दूधिया अवस्था 6. दाना पकते समय	20–25 45–50 65–70 85–90 100–110 120–130	1	शीर्ष जमने पर	20–25
						2	1. शीर्ष जड जमने पर 2. दाने की दूधिया अवस्था	20–25 100–105
						3	1. शीर्ष जड जमने पर 2. फुटान की उत्तरावस्था 3. दाने की दूधिया अवस्था	20–25 50–60 100–110
						4	1. शीर्ष जड जमने पर 2. फुटान की उत्तरावस्था 3. वालियां निकलते समय 4. दाने की दूधिया अवस्था	20–25 45–50 60–90 100–110
जौ	35–40	6–8	2–3	1. कल्ले पडना 2. फूल आने पर 3. दाने की दूधिया अवस्था	30–35 65–70 90–95	2	1. कल्ले फूटते समय 2. दाने की दूधिया अवस्था	30–35 90–95
सरसों	25–30		1–2	1. फूल आने से पूर्व 2. फली भरते समय	30–40 70–80	1	फूल आने पर	45–50
चना / मटर	20–25 25–30		1–2	1. फूल आने से पूर्व 2. फली भरते समय	40–45 75–80	1	फूल व फली आने के मध्य	60–65
अलसी	20–25		2	1. शाखाऐं निकलते समय 2. डोडिया आते समय	40–45 60–75	1	फूल डूबने पर	50–60
मसूर	20–25		2	1. फूल आने पर 2. फली भरते समय (हल्की सिंचाई)	45–50 80–85	1	फूल आने पर	45–50
तारामीरा	20–25		2	1. फूल आने पर 2. फली भरते समय	40–50 80–85	1	फली बनना शुरू होने पर	50–60
सूरजमुखी	30–40		2–3	1. चार पत्ती आने पर 2. मुण्डक छटते समय 3. दाना भरने समय	35–40 65–70 105–110	2	1. चार पत्ती आने पर 2. मुण्डक व दाना भरने के मध्य	35–40 90–100

✺✺✺

धावल-गेहूँ फसल प्रणाली में मृदा स्वास्थ्य और फसल उत्पादकता में सुधार के लिए फसल अवशेषों का पुनर्चक्रण

चेतराम मीना, भवानी शंकर मीना, पूजा विशनोई, एंव आशीष मीना

कृषि महाविद्यालय, जोधपुर, कृषि अनुसंधान केंद्र, कोटा, सस्य विज्ञान विभाग, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

फसल की कटाई के बाद खेत में बचा हुआ पौधे का वह भाग (भूसा, डंठल, तने, पत्तियां, जड़ें) जिसका घरेलू उपयोग नहीं किया जाता या जिसे व्यावसायिक रूप से नहीं बेचा जाता। फसल कटाई के बाद खेत में छोड़े गए गैर–आर्थिक पौधे के हिस्से तथा पैकिंग शेड से निकले अवशेष या फसल प्रसंस्करण के दौरान फेंक दिए गए अवशेष। फसल अवशेष कार्बनिक पदार्थ और पौधों के पोषक तत्वों का उत्कृष्ट स्रोत हैं एवं फसल अवशेष एक प्राकृतिक संसाधन हैं, अपशिष्ट नहीं। फसल अवशेषों के समावेश से मृदा पर्यावरण में परिवर्तन होता है, जो बदले में मृदा में सूक्ष्मजीवों की संख्या और गतिविधि तथा उसके बाद पोषक तत्वों के परिवर्तन को प्रभावित करता है। रासायनिक उर्वरकों की बढ़ती कीमतों और मृदा स्वास्थ्य में गिरावट के कारण फसल उत्पादन में जैविक अवशेषों के पुनर्चक्रण की आवश्यकता पर ध्यान दिया जा रहा है। फसल अवशेष मृदा को भौतिक, रासायनिक और जैविक रूप से लाभ पहुँचाते हैं। वर्तमान में, सघन फसल प्रणाली में केवल अकार्बनिक उर्वरकों के उपयोग से मृदा उर्वरता में असंतुलन, मृदा की प्रतिकूल भौतिक स्थिति और जैविक प्रणाली उत्पन्न होती है। इससे मृदा स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचता है, इसलिए फसल अवशेषों के पुनर्चक्रण से इस समस्या का समाधान किया जा सकता है एवं भारत में, फसल अवशेषों को कार्बन उत्सर्जन का प्रमुख स्रोत माना जाता है।

भारत में विभिन्न फसलों द्वारा उत्पन्न कुल अवशेषों में अप्रयुक्त अवशेषों का हिस्सा

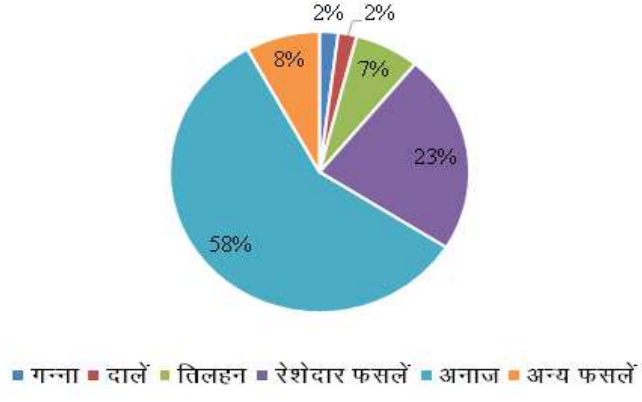

फसल वशेष प्रबंधन

मृदा संरक्षण और सुधार के लिए पौधे या फसल के गैर–व्यावसायिक भाग का उपयोग करना चाहिए। फसल अवशेष प्रबंधन, एक ऐसी कृषि पद्धति है जिसमें कम और कम गहन जुताई वाले कार्य शामिल होते हैं और पिछली फसल के अधिक अवशेषों को संरक्षित किया जाता है। यह मृदा और जल संसाधनों की सहायता और सुरक्षा करने तथा पौधों को अतिरिक्त पोषक तत्व और पर्यावरणीय लाभ प्रदान करने के लिए योजना की गई है।

फसल अवशेष प्रबंधन की आवश्यकता

अपशिष्ट और फसल अवशेषों सहित उपलब्ध जैविक स्रोतों का उपयोग करते हुए प्रभावी पोषक तत्व प्रबंधन करना तथा भूमि और वायु पर अत्यधिक प्रदूषण से मुक्त एक स्वीकार्य वातावरण बनाए रखना। दुर्लभ और अधिक महंगे कच्चे माल और ऊर्जा चक्र (यहाँ मौजूद) का संरक्षण करना एवं रासायनिक उर्वरकों के उपयोग पर अंकुश लगाना।

मृदा स्वास्थ्य पर फसल अवशेषों के पुनर्चक्रण की भूमिका

कृषि के दृष्टिकोण से, मृदा स्वास्थ्य को मृदा की स्थायी रूप से फसल उत्पादन करने की क्षमता के रूप में संदर्भित किया जा सकता है क्योंकि यह कई भौतिक, रासायनिक और जैविक प्रक्रियाओं द्वारा नियंत्रित होता है। लंबे समय तक एक या एक से अधिक प्रतिकूल मृदा परिस्थितियों के बने रहने से कृषि प्रणाली असंपोषणीय हो जाती है तथा उर्वरकों की दक्षता बढ़ाने के लिए जैविक खाद का उपयोग किया जाता है। गहन कृषि में, रासायनिक उर्वरकों के निरंतर उपयोग के कारण मिट्टी अक्सर बीमार हो जाती है। पौधों की बेहतर वृद्धि के लिए उचित राइजोस्फीयर बनाए रखने में मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

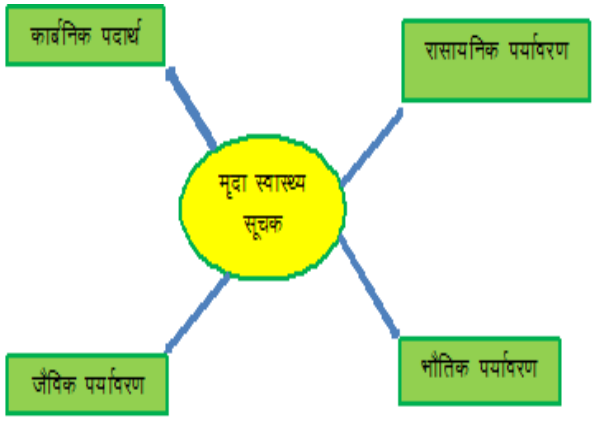

फसल अवशेष के प्रकार : कृषि फसल अवशेष विभिन्न प्रकार के होते हैं:

1. खेत/फसल अवशेष : फसल कटने के बाद खेत में बची हुई सामग्री उदाहरण: ठूंठ, भूसा और पत्तियाँ, इन्हें सीधे मिट्टी में जोत दिया जाता है और खेत के अवशेषों का अच्छा प्रबंधन मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में सुधार करता है।

2. प्रक्रिया अवशेष : फसल के बाद बची सामग्री को उपयोगी संसाधन में बदल दिया जाता है, उदाहरण: मूंगफली के छिलके, भूसी, खोई, गुड़, खली, मक्का, ज्वार, बाजरा के भुट्टे इनका उपयोग पशुओं के चारे, मृदा सुधार, उर्वरक और इनके निर्माण के लिए किया जा सकता है।

फसल अवशेषों के पुनर्चक्रण के तरीके

1. **यथास्थान निगमन :** फसल अवशेषों को अगली फसल की बुवाई से पहले मिट्टी में मिला दिया जाता है तथा पोषक तत्वों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए फसल अवशेषों के अपघटन के लिए उपलब्ध समय महत्वपूर्ण है। व्यापक कार्बनः नाइट्रोजन अनुपात वाले फसल अवशेष मिट्टी में धीरे–धीरे अपघटित होते हैं जिसे मिट्टी के अपघटन गुणों, तापमान और नमी की स्थिति से अत्यधिक प्रभावित होता है।

2. **सतह पर मल्च के रूप में फसल अवशेष :** मल्च मिट्टी की ऊष्मा परावर्तनशीलता और जल संचरण विशेषताओं को प्रभावित करता है तथा मल्च मिट्टी की जल भंडारण क्षमता में भी सुधार करता है और वाष्पीकरण से होने वाली हानि को कम करता है। फसल अवशेष मल्च का मिट्टी पर लाभकारी प्रभाव नमी संरक्षण और मध्यम मिट्टी का तापमान बनाये रखता है एवं फसल अवशेष अपवाह, अपरदन और तलछट को नदी में ले जाने का एक प्रभावी माध्यम है।

3. **फसल अवशेषों से खाद बनाना :** जब कच्चे माल का कार्बनः नाइट्रोजन अनुपात 30:1 होता है, तो यह कुशल खाद निर्माण के लिए सबसे अनुकूल होता है जैसे गेहूँ, धान, ज्वार, बाजरा, मक्का, गन्ने के अवशेषों, कपास के डंठलों जैसे अवशेषों में कार्बनः नाइट्रोजन अनुपात अधिक होने पर सूक्ष्मजीवी गतिविधियाँ कम हो जाती हैं, क्योंकि उन्हें पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन नहीं मिल पाता जिसके परिणामस्वरूप, कार्बनयुक्त पदार्थो के अपघटन के लिए कई चक्रों की आवश्यकता हो सकती है, जिससे खाद निर्माण की अवधि बढ़ जाती है। यदि कार्बनः नाइट्रोजन अनुपात कम है, अर्थात 30% से कम है, तो नाइट्रोजन का अनुपात सूक्ष्मजीवों की आवश्यकता से अधिक होता है, फलस्वरूप, अपघटन की प्रक्रिया तेज होती है।

फसल अवशेष पुनर्चक्रण को प्रभावित करने वाले कारक : 1. फसल अवशेष का प्रकार, 2. कार्बनःनाइट्रोजन अनुपात, 3. फसल की गुणवत्ता, 4. आनुवंशिक रूप से संशोधित जीव, 5. मृदा संघनन, 6. मृदा में जैविक विविधता, 7. फसल अवशेष पर मृदा संपर्क की मात्रा, 8. बढ़ते मौसम के दौरान प्रयुक्त उत्पादों का प्रकार और 9. मौसम–तापमान और नमी।

मिट्टी के भौतिक गुणों पर फसल अवशेषों के पुनर्चक्रण का प्रभाव

मृदा संरचना : मृदा में कार्बनिक पदार्थो के मिलने से समुच्चयों के निर्माण को बढ़ावा मिलता है तथा फसल अवशेष मिलाने से संरचनात्मक स्थिरता बढ़ती है और मृदा विघटन फसल अवशेषों में कमी के कारण समुच्चय का आकार वितरण बेहतर होता है।

स्थूल घनत्व और सरंध्रता : कम स्थूल घनत्व होने के कारण, गोबर की खाद में फसल अवशेष मिलाने से मृदा का स्थूल घनत्व कम हो जाता है और सरंध्रता बढ़ जाती है।

द्रवचालित चालकता : फसल अवशेष मृदा संरचना, सूक्ष्मबीजाणुओं और समुच्चय स्थिरता में परिवर्तन करके द्रवचालित चालकता बढ़ाते हैं।

मृदा तापमानः पौधों के अवशेषों से मल्चिंग करने से सर्दियों में मृदा से ऊपर की ओर ऊष्मा प्रवाह में कमी के कारण मृदा का न्यूनतम तापमान बढ़ जाता है और छायांकन प्रभाव के कारण गर्मियों में मृदा का तापमान कम हो जाता है।

मृदा नमी : मृदा सतह पर अवशेषों की मात्रा में वृद्धि के कारण वाष्पीकरण दर कम हो जाती है।

कार्बनिक पदार्थ : निरंतर कार्बनिक पदार्थ मृदा मिलाने से कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ जाती है जो फसल के लाभदायक है।

मृदा पीएच : कार्बनिक ऋणायनों के विकार्बोक्सिलेशन, लिगैंड विनिमय और मूल धनायनों के योग से मृदा पीएच में उल्लेखनीय वृद्धि होती है।

धनायनों की विनिमय क्षमता : पौधों के पोषक तत्वों के भंडार के रूप में मृदा कार्बनिक पदार्थ, वृद्धि के लिए आवश्यक तत्वों के निक्षालन को रोकता है जिसे अवशेषों के योग से धनायनों की विनिमय क्षमता बढ़ती है।

मिट्टी के जैविक गुणों पर फसल अवशेषों के पुनर्चक्रण का प्रभाव

यह सूक्ष्मजीवों की वृद्धि और गतिविधियों के लिए ऊर्जा प्रदान करता है और सूक्ष्मजीवी बायोमास के लिए आधर प्रदान करता है। जैविक नाइट्रोजन–स्थिरीकरण के लिए उपयुक्त वातावरण प्रदान करता है और बलुई दोमट मिट्टी में एंजाइम, सूक्ष्मजीवी बायोमास, डिहाइड्रोजनेज और क्षारीय फॉस्फेट की गतिविधियाँ बढ़ जाती हैं। सूक्ष्मजीवी बायोमास में वृद्धि और यह मिट्टी में पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ा सकता है, साथ ही सूक्ष्मजीवी बायोमास पौधों के पोषक तत्वों के स्रोत के रूप में कार्य करता है।

एक अच्छे फसल अवशेष पुनर्चक्रण कार्यक्रम के परिणाम : 1. ह्यूमस में वृद्धि, 2. मृदा अपरदन में कमी, 3. मृदा कठोर परत में कमी, 4. जल अपवाह में कमी, 5. नमी प्रतिधारण में वृद्धि, 6. मृदा अश्वक्सीजन में वृद्धि, 7. पोषक तत्व प्रतिधारण में वृद्धि, 8. अमीनो अम्ल में वृद्धि, 9. रोग और कीटों का दबाव कम और, 10. वायु से छ संचयन में वृद्धि।

फसल उत्पादन में सूक्ष्म पोषक तत्वों का महत्व

राजेंद्र कुमार यादव, विनोद कुमार यादव, मनोज कुमार शर्मा एवं राकेश कुमार यादव
कृषि अनुसन्धान केंद्र, उम्मेदगंज, कोटा, कृषि महाविद्यालय, उम्मेदगंज, कोटा

पौधों की वृद्धि, विकास और उपज के लिए कई पोषक तत्व आवश्यक होते हैं। इनमें से कुछ तत्व बहुत कम मात्रा में चाहिए होते हैं, जिन्हें सूक्ष्म पोषक तत्व कहा जाता है। इनकी मात्रा भले ही अल्प हो, लेकिन पौधों की जीवन क्रियाओं और उत्पादकता में इनका योगदान अत्यंत आवश्यक होता है। इन सूक्ष्म पोषक तत्वों में लौह (Fe), जस्ता (Zn), मैंगनीज (Mn), तांबा (Cu), बोरॉन (B), मोलिब्डेनम (Mo), क्लोरीन (Cl) और निकल (Ni) प्रमुख हैं। ये तत्व पौधों में क्लोरोफिल निर्माण, एंजाइमों की सक्रियता, नाइट्रोजन स्थिरीकरण, परागण और फल–बीज निर्माण जैसी प्रक्रियाओं में मदद करते हैं। हालांकि इनकी आवश्यकता बहुत कम होती है, फिर भी इनकी कमी से फसलों की वृद्धि रुक जाती है, उत्पादन घट जाता है और गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। पिछले कुछ वर्षों में मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी बढ़ी है, जिसका मुख्य कारण है–अत्यधिक रासायनिक खादों का प्रयोग, गहन खेती, ऊपरी मिट्टी का कटाव, असंतुलित सिंचाई, जैविक खादों का अभाव और बार–बार एक ही फसल उगाना। इन तत्वों की कमी मृदा की उर्वरता को घटाती है, जिससे फसलों की पैदावार और गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसलिए आवश्यक है कि किसान मृदा परीक्षण, संतुलित खाद प्रबंधन, और जैविक पोषक तत्वों का उपयोग करें, ताकि भूमि की उर्वरता बनी रहे और उत्पादन में निरंतरता बनी रहे।

सूक्ष्म पोषक तत्वों के प्रकार और महत्व

आयरन

कार्य :

1. यह साइट्रोक्रोम में पाये जाने वाले हेम–आयरन–प्रोफायरिन जटिल अवयव के प्रोस्थेटिक समुह का अंग होता है। साइट्रोक्रोम हरितलवक के अपचयोपचय प्रणाली (redox system) माइट्रोकान्ड्रिया तथा नाइट्रेट रिडक्टेज इंजाइम में पाये जाने वाले अपचयोपचय श्रृखला (redox chain) का महत्वपूर्ण अवयव होता है।
2. यह केटालेज, परऑक्सीडेज, साइटोक्रोम ऑक्सीडेज, प्रोफायरिनोजेन ऑक्सीडेज, एमीनोलेवोलेनिक एसिड सेन्थेटेज, एस्कॉर्बेट परऑक्सीडेज इत्यादि इंजाइमों की सक्रियता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
3. यह प्रकाश संश्लेषण क्रिया में होने वाले ऑक्सीकरण–अवकरण अभिक्रियाओं में सहायक होता है।
4. यह नाइट्रोजिनेज इंजाइम, लेग्हेमोग्लोबिन, फेरिक्रोम इत्यादि का मुख्य अवयव होता है।
5. यह पर्णहरित तथा हेम संश्लेषण का पूर्ववर्ति होता है तथा एमीनोलेवोलेनिक ऐसिड के दर को नियंत्रित करने में सहायक होता है।
6. यह मैग्नीशियम प्रोटोप्रोफायरिन से प्रोटोक्लोरोफायलाइड के संश्लेषण में आवश्यक होता है जो सूर्य के प्रकाश में क्लोरोफिल में परिवर्तित हो जाता है।
7. हरितलवक में पाये जाने वाले थिलेक्वायड्स झिल्ली में लगभग 20 आयरन अणु प्रत्यक्ष रुप से इलेक्ट्रोन स्थानान्तरण श्रृखला में शामिल होते है।

कमी के लक्षण

1. आयरन की कमी से नई पत्तियों में नसों के बीच का भाग पीला हो जाता है। तथा नसे हरी रहती है।
2. इसकी कमी से पत्तियों का रंग पीला या सफेद हो जाता है।
3. आयरन की कमी से नई पत्तियों में सटार्च एवं शर्करा की सान्द्रता कम हो जाती है।
4. इसकी कमी से धान में 'अन्तशिरा हरितमा रोग तथा 'आईवरी वाईट रोग होता है।
5. आयरन की कमी की दशा में द्विबीजपत्र पौधों में राइबोफ्लेविन एकत्र होने लगते है और जड़ो के माध्यम से यह 200 गुना अधिक तेजी से मृदा में मुक्त होता रहता है।

मैगनीज

कार्य :

1. मैगनीज लगभग 35 विभिन्न इंजाइमों में को–फैक्टर की तरह कार्य करता है। इसमें से अधिकांश इंजाइम ऑक्सीकरण–अवकरण, डीकाब्रोक्सिलेशन मथा हाइड्रोलायटिक अभिक्रियाओं को उत्प्रेरित करते है। यह लिग्नन संश्लेषण में भाग लेने वाले एमिनो अम्लो एवं फिनॉल के संश्लेषण से संबंधित इंजाइमों को उत्प्रेरित करता है।
2. यह ट्राइकार्बोक्सिलिक एसिड चक्र में होने वाली आक्सीकृत एवं आक्सीकृत अभिक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।
3. यह नाइट्रेट को अमोनिया में अवकृत करने वाले इंजाइम कियाशीलता में सहायक होते है।
4. यह खराब वायूसंचाार के दूस्प्रभाव को रोकने में सहायक होते है।
5. यह क्लोरोफिल निर्माण में सहायक होते है।
6. यह कार्बोहाइड्रेड एवं प्रोटीन के उपापचयन में सहायक होते है।
7. यह प्रकाश संश्लेषण किया, इंजाइम की क्रियाशीलता जड़ों के विकास के लिए आवश्यक होता है।

कमी के लक्षण

1. इसकी कमी का लक्षण सर्वप्रथम नई पत्तियों पर दिखाई देते है। पत्तियाँ पीली पड़ जाती है। अत्यधिक कमी होने पर पेड़ो पत्तियाँ का हल्का हल्का हरा रंग सफेद हो जाता है। पुरानी पत्तियों के ऊपर मृत धब्बे दिखाई देते है।
2. इसकी कमी से पौधों की वृद्धि रुक जाती है।
3. इसकी कमी होने पर लिग्नन एवं फिनॉल का निर्माण प्रभावित होता है।
4. मैगनीज की कमी का प्रभाव जई पर सबसे अधिक देद्वान को मिलता है। जब पौधे 6 से 9 सेमी. के होते है, उसी समय निचली पत्तियों नीले–भूरे रंग क धब्बे या धारियाँ दिखाई देते है जो आपस में मिलकर बादामी रंग की हो जाती है, इस जई की बीमारी ग्रे स्पीक के नाम से जानते है। जड़ों का विकास भी ठीक प्रकार से नही होता है और पौधे सूखने लगते है।
5. इसकी कमी से पौधों में शुष्क पदार्थ का उत्पादन, प्रकाश संश्लेषण तथा क्लोफिल की मात्रा में कमी आती है। परन्तु श्वसन एवं वार्ष्पोत्सर्जन पर कोई प्रभाव नही पड़ता है।
6. इसकी कमी से फूलों में परागकण की उर्वरता में कमी आती है जिससे दाने कम बनते है तथा उपज में कमी आती है।
7. मैगनीज की कमी से फसलों पर भिन्न–भिन्न प्रकार की बिमारियाँ उत्पन्न होती है जिसे निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया है–

कॉपर (Copper)

कार्य :

1. प्रकाश संश्लेषण, श्वसन, कार्बन तथा नत्रजन के उपापचयन तथा आक्सीडेटिव तनाव इत्यादि का कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
2. यह इलेक्ट्रोन स्थानान्तरण अभिक्रिया में भी भाग लेता है।
3. पौधों में अधिकतर कॉपर इंजाइमों के साथ बंधा रहता है जो रिडाक्स रिएक्सन को उत्प्रेरित करने का कार्य करता है।
4. यह पौधों में लगभग 100 से अधिक प्रोटीन के साथ जुड़ा होता है ।
5. पौधों में पाये जाने वाले लगभग 50 प्रतिशत कॉपर हरितलवक में पाया जाता है जो प्लास्टोसायनिन के साथ बंधा रहता है तथा प्रकाश संश्लेषण किया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
6. यह इथाइलिन ग्राही का भी ऐ भाग होता है तथा मॉलिब्डेनम को–फैक्टर के जैव संश्लेषण में सहायक होता है।
7. यह शूक्ष्म जीवों द्वारा नत्रजन स्थिरीकरण में भी सहायक होता है।
8. यह क्लोरोफिल को नष्ट होने से बचाता है तथा यह आयरन के उपयोग में मदद करता है।

कमी के लक्षण

1. इसकी कमी से नई पत्तियों पीली पड़ जाती है।
2. दलहनी फसलों में कॉपर के अभाव में जड़ों पर बनने वाली गाँठों की संख्या कम होती है जिससे नत्रजन स्थिर करले की दर में कमी आती है।
3. इसकी कमी से पौधों में प्रकाश संश्लेषण की किया धीमी हो जाती है जिससे कार्बोहाड्रेड संश्लेषण में गिरावट आती है। इसकी कमी से जुझ रहे गेहूँ के पौधों में वानस्पतिक की सान्द्रता कम हो जाती है।
4. इसकी कमी से पौधों में कोशिका–भित्तियों में लिग्निन की मात्रा कम हो जाती है जिसके कारण पत्तियाँ व ठहनियाँ टेढ़ी–मेढ़ी हो जाती है।
5. इसकी कमी से वानस्पतिक विकास के तुलना में दानें, बीज एवं फल बनने की प्रक्रिया अधिक प्रभावित होती है।
6. इसकी कमी से पौधें बौने रह जाते है जिससे उपज घट जाती है।
7. इसकी अत्यधिक कमी होने से पौधों के अग्र भाग की वृद्धि सबसे पहले प्रभावित होती है जिससमे नई पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती है। नई पत्तियों की नसें हल्की गहरी बनी रहती है।
8. दलहनी फसों में नई पत्तियाँ सुखने लगती है तथा अधिक नमी होते पर अधिक संख्या में नई पत्तियाँ झड़ने लगती है।
9. नीबूवर्गिय पेड़ों की बड़ी पत्तियाँ प्रायः कुरुप हो जाती है उनका रंग हल्का पड़ जाता हैं तथा फलों के छिके पर गोद जैसा चिपचिपा पदार्थ जमा हो जाता है।

जिंक (Zinc)

कार्य :

1. यह अल्कोहल डिहाड्रोजिनेज, फास्फोलाइपेज, कार्बोक्सिलपेप्टाइडेज, एल्कलाइन फास्फेटेज, कॉपर ऑक्साइड डिसम्यूटेज, कार्बोनिक एन्हाइड्रेज, पेप्टाइडेज इत्यादि इंजाइमों का महत्वपूर्ण अंग है।
2. यह एनोलेज, आक्जेलो एसिटिक डिकार्बोक्सिलेज, लेसिथिनेज, डिसल्फाहाइड्रेस, डिहाइड्रोजिनेज, एल्डोलेज, आइसोमरेज, ट्रान्सफास्फोरायलेज, आर.एन.ए. एवं डी.एन.ए. पालीमरेज आदि इंजाइमों की सक्रियता बढ़ाने में सहायक होता है।
3. यह प्रोटीन, केरोटीन तथा सिस्टीन के संश्लेषण में आवश्यक होता है।
4. यह कार्बोहाइड्रेडस के उपापचयन तथा ऑक्सिन हार्मोन की सक्रियता में आवश्यक होता हैं
5. यह जल अवशोषण के साथ–साथ क्लोरोफिल निर्माण में सहायक होता है।
6. यह पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करनक वाले पदार्थो के निर्माण में सहायक होता है।
7. जिंक के उपयोग से कपास की फसल में फ्यूजेरियम, टमाटर में फाइटोपथोरा, तम्बकू में मोजेक विषाणु के नियंत्रण में सहायता मिलती है।

कमी के लक्षण

1. जब पौधें में जिंक की सान्द्रता 15–20 मिलीग्रीम जिंक/किलोग्राम शुष्क भार से कम होती हैं तो इसकी कमी के लक्षण पौधों पर दिखाई देते है।
2. इसकी कमी से सोयाबीन की पुरानी पत्तियों का रंग लाल–हरा हो जाता है।
3. आलु के पौधों में जिंक की कमी से धूसर भूरे रंग के या काँसे के रंग के अनियमित धब्बे पड़ जाते है। ये धब्बे प्रायः पत्तियों के बीच में होते है।
4. इसकी कमी से धान में खैरा रोग (khaira disease) होता है। इस रोग में सर्वप्रथम तीसरी पत्ती के आधार पर लाल भूरे रंग के छोटे धब्बे प्रकट होते है जो कुछ समय बाद एक दूसरे से मिलकर भूरे रंग के बड़े धब्बे का रुप ले लेते है। धीरे–धीरे ये लक्षण ऊपर की पत्तियों में प्रकट होने लगते है और पत्तियाँ अलग होकर गिरने लगती है। पौधों की वृद्धि रुक जाती हैं। खेत में अधिक समय तक पानी लगे रहने से यह रोग तीव्र गति से बढ़ता है।
5. इसकी कमी से नीबू की पत्तियों में शिराओं का भाग पीला पड़ जाता है, जिसे धब्बेदार पत्ती राग कहते है।
6. मिर्च में इसकी कमी से पत्तियाँ पतली एवं छोटी हो जाती है मथा गुच्छों में दिखाई देती है
7. इसकी कमी से अभिक्रियाशील ऑक्सीजन स्पीशीज की अधिक मात्रा में बनने से कोशिका झिल्ली के सामान्य संरचना एवं संघटन में परिवर्तन हो जाता है।
8. मृदा में अधिक मात्रा में फास्फोरस के प्रयोग करने से भी पौधों में जिंक की कमी हो जाती हैं। इससे फसलों के दानों में जिंक की सान्द्रता में कमी आती हैं।

बारोन (Boron)

कार्य :

1. यह कार्बोहाइड्रेट्स एवं आक्सिन के स्थानांतरण, प्रकाश संश्लेषण, प्रोटीन तथा पानी के उपापचयन, कोशिका विभाजन एवं कार्टेक्स का विकास, कोशिका भित्ति मे पेक्टिन का निर्माण इत्यादि के लिए आवश्यक होता है।
2. यह परागण तथा प्रजनन क्रिया में सहायक होता है।
3. यह पानी के अवशोषण को भी नियंत्रित करता हैं।
4. फसलों मे बोरोन की पर्याप्त उपलब्धता जड़ो में बनने वाले गाँठदार रोग की सम्भावना कम हो जाती है।
5. बोरोन पौधों में परागनली की वृद्धि के लिए आवश्यक होता है जिससे फूल व बीज बनने में सहायता मिलती है।

कमी के लक्षण्

1. इसकी कमी से दलहनी फसलों की जड़ो पर बबने वाली गाँठों का निर्माण रुक जाता है।
2. नई पत्तियाँ गुच्छे का रुप लेकर फुल जाती है।
3. अधिकांश पौधों में शीर्षस्थ कलिकाएँ मर जाती है।
4. बोरोन की कमी से पत्तियों में मोटापन, कड़ापन, मुड़ा होना, झुरियाँ

पड़ना, सूख जाना, हरिमाहीनता का होना इत्यादि लक्षण दिखाई पड़ सकते है।

5. फूलगोगी में फूल बदरंग होकर गेरुई भूरा हो जाता है तथा पत्तियों के किनारे पीले एव लाल हो सकते है।
6. जड़ो में पत्तियों तक जल एवं पोषक तत्वों को ले जाने वाले उत्तकों की प्रणाली खराब हो जाती है।
7. इसकी कमी से फूलों का बनना कम हो जाता है। फूलों में परागकणों की संख्या भी कम होती है तथा उसमें निशेचन करनक की क्षमता कम होती है। परिणामस्वरुप पौधों पर फल कम संख्या में लगते है तथा परिपक्व होने से पहले ही गिर जाते है।
8. बोरोन की कमी जड़ो का पिकसा रुक जाता है जिससे छोटी तथा झाड़ीनुमा दिखाई देती है।
9. बोरोन की कमी से फलों का फटना एक आम समस्या है।

मॉलिब्डेनम (Molybdanum)

कार्य :

1. यह प्रोटीन एवं अमीनो अम्ल के सं लेषण को प्रभावित करजा है।
2. यह सहजीवी एवं असहजीवी नत्रजन स्थिरिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मथा दलहनी फसलों का उपज बढ़ाने में सहायक होता है।
3. मॉलिब्डेनम की कमी खासकर अम्लीय मृदाओं में उगायी गई दलहनी फसलों, फूलगोबी एवं मक्के में देखने को मिलती है। इन मृदाओं में अभिक्रियाशील आयरन ऑक्सीहाइड्रेट की सान्द्रता अधिक होती है जो अधिक मात्रा में $MoO4+$ आयन अधिशोषित कर लेती है। दस प्रकार मृदा पी.एच. मान कम होने के साथ–साथ मॉलिब्डेनम का अवशोषण बढ़ता जाता है।
4. यह नाइट्रोजन स्थिरीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते वाले नाइट्रेट रिडक्टेज इंजाइम का महत्वपूर्ण अंग होता है जो इलेक्ट्रोन वाहक का कार्य करता है। साथ्थ यह अन्य तीन इंजाइम जेंथिन डीहाइड्रोजिनेज, एल्डीहाइड ऑक्सीडेज तथा सल्फाइट ऑक्सीडेज के सं लेषण में सहसयक होता है।
5. यह शर्करा एचं विटमीन–सी के संश्लेषण में सहसयक होता है।
6. यह एस्कार्बिक एसिड तथा इंजाइम क्रियाशीलता को प्रभावित करता है।
7. यह फास्फोरस उपापचयन को प्रभावित करता है।

कमी के लक्षण

1. इसकी कमी के लक्षण नत्रजन के कमी के लक्षण से मिलते–जुलते है।
2. इसकी कमी से तना पीले रंग के का हो जाता है पत्तियों पर पीले धब्बे पड़ जाते हैं जिससे पत्तियाँ झुलसकर मुड़ जाती है।
3. इसकी अधिक कमी होने से पत्तियाँ कागज जैसी होकर कटोरी के आकार में परिवर्तित हो जाती है
4. इसकी कमी से पुष्पन किया भी बाधित होती है जिससे फलों का बनना अवरुद्व हो जाता हैं
5. इसकी कमी से होने वाली बीमारीयाँ निम्न है–

- फूलगोबी में व्हिपटेल
- सेम में स्कोल्ड रोग
- नीबू में पाला धब्बा रोग

क्लोरीन (Chlorine)

कार्य :

1. यह विटामिन बी–1 2 तथा अन्य प्रकार के इंजाइमों का अनिवार्य घाटक होने के साथ प्रकाश संश्लेषण क्रिया में ऑक्सिजन उत्पन्न करने तथा परासरण दाब को बनाये रखने के लिए भी आवश्यक माना जाता है।
2. यह अनेक प्रकार के फसलों में कार्बोहाइड्रेड उपापचयन में काफी उपयोगी होता है। साथ ही यह अनेक फलों के उत्पादन में अपना महत्वपूर्ण योगदान देता है।
3. यह कोशिका रस में धनायन संतुलन बनाए रखता है।
4. इसकी कमी से पौधों में अमीनो अम्ल एकत्र हो जाते है। इस प्रकार यह प्रोटीन संश्लेषण को प्रभावित करता है।
5. क्लोरीन एन्थोसायनिन्स का भी संघटक पदार्थ होता है।

कमी के लक्षण

1. क्लारीन की कमी से पौधें सूख जाते है।
2. टमाटर में नई छोटी पत्तियाँ सूख जाती है। हरिमाहीनता उत्पन्न हो जाती है और पत्तियाँ नीचे की ओर ताँबे की रंग जैसी होकर जाती है।
3. इसकी कमी से पत्तागोबी की पत्तियाँ सिकुड़ जाती है। तथा बंदगोबी में गन्धहीनता उत्पन्न हो जाती है।

निकेल (Nickel)

कार्य :

1. निकेल का मृदा में प्रयोग करने या पार्णीय छिड़काव करनक से पौधों का विकास अच्छी तरह से होता है। इसकी उपस्थिति से पत्तियों में यूरिया की सान्द्रता कम होती है तथा यूरियेज इंजाइम की क्रियाशीलता बढ़ती है।
2. यह बीजों की जीवनक्षमता, अकुरण दर तथा बीजड़ों को मजबुती प्रदान करता है।
3. यह नाइट्रोजन उपापचयन में भी मुख्य भुमिका निभाता है।
4. यह राइजोबिया में हाइड्रोजिनेज इंजाइम की क्रियाशीलता बढ़ाने में सहायक होता है।
5. यह बीजों या दानों में पोषक तत्वों के स्थानान्तरण में सहायक होता है।

कमी के लक्षण

1. इसकी कमी से यूरियेज इंजाइम की क्रियाशीलता प्रभावित होती है। फलस्वरुप पत्तियों में यूरिया एकत्र होती रहती है जिससे पत्तियों का अग्रभाग पहले पीला पढ़ता है तथा बाद में ऊतकों के मरने के कारण सूख जाता है।
2. इसकी कमी से पौधे अल्प समय मे ही परिपक्व हो कर मर जाते है।
3. इसकी कमी से पत्तियों में विकृति आ जाती है जिसे माऊस इसर के नाम से जानते है।
4. इसकी कमी से पादप ऊतकों में यूरिया एकत्र होता है मथा अमीनो अम्ल मे कमी आती है।
5. इसकी कमी से गेहूँ, जौ मथा जई की नई पत्तियाँ पीली पड़ जाती है तथा पत्तियाँ आकार में छोटी रह जाती है एवं ऊपर की तरफ इनका विकास कम होता है।

इसकी कमी से अरजिनेज (प्रोटीन का मुख्य अवयव) मथा ग्लूटरमिन सिन्थेटेज की क्रियाशीलता में कमी आती है।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती

तनवीर कौर, हरीश वर्मा, नीरज हाड़ा एवं सेवाराम रुण्डला
कृषि महाविद्यालय, बारां एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, बून्दी

भारतीय कृषि प्रणाली में उर्वरक और कीटनाशकों के बढ़ते प्रयोग पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचा रहे हैं। मृदा में रसायनों के अत्यधिक प्रयोग से मृदा में उपस्थित लाभदायक जीवाणु नष्ट होते जा रहे हैं। जिससे मृदा की उपज एवं मृदा गुणवत्ता में लगातार गिरावट आ रही है। एक समय के बाद मृदा ऊसर हो जायेगी एवं मृदा खेती योग्य नहीं रहेगी। भारत का पंजाब राज्य सर्वाधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग कर रहा है। जिससे उस क्षेत्र की मृदा की गुणवत्ता कम होती जा रही है। अत्यधिक रासायनों के प्रयोग से मानव स्वास्थ्य अत्यधिक प्रभावित हो रहा है। पौधों को पोषक तत्व उपलब्ध करवाने के लिए रासायनिक उर्वरक एवं खादों का प्रयोग किया जाता है। जिससे किसानों की लागत में वृद्धि होती है एवं मृदा में उपस्थित लाभदायक जीवाणु केंचुए, एक्टीनोमाइसीटिज आदि नष्ट होते जा रहे हैं। देश में 86 प्रतिशत किसान छोटे एवं सीमान्त है, जिसमें से 50 प्रतिशत किसानों पर कर्ज है। भारत सरकार भारतीय कृषि स्थिरता एवं टिकाऊपन को सुनिश्चित करने एवं किसानों की आय दुगुनी करने के लिए जीरो बजट प्राकृतिक खेती को बढ़ावा दे रही है। प्रधानमंत्री मोदी जी ने प्राकृतिक खेती पर राष्ट्रीय सम्मेलन 2021 को संबोधित करते हुए कहा'' हमें कृषि को रासायनिक प्रयोगशाला से बाहर निकालकर प्रकृति की प्रयोगशाला से जोड़ने की आवश्यकता पर जोर दिया। भारत सरकार राष्ट्रीय कृषि विकास योजनान्तर्गत परम्परागत कृषि विकास योजना आदि के तहत जैविक खेती को प्रोत्साहित कर रही है। परम्परागत कृषि विकास योजना के तहत तीन वर्षों के लिए प्रति हैक्टेयर 50,000 रुपये की अनुदान राशि प्रदान करती है जिसमें से 31,000 रुपये आदान खरीदने (बीज, जैव उर्वरक) एवं कटाई के बाद प्रत्यक्ष हस्तांतरण के रुप में दिया जाता है।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती :

- रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक एवं बाहरी संसाधनों का प्रयोग ना करके पेड़–पौधों की वृद्धि और उनसे उत्पादन लेने के लिए जिन–जिन संसाधनों की आवश्यकता होती है, उसे उपलब्ध करवाने के लिए प्रकृति को बाध्य किया जाता है। जिसे प्राकृतिक खेती कहते हैं एवं मुख्य फसल की लागत मूल्य सहयोगी फसलों में से लेना और मुख्य फसल बोनस के रुप में प्राप्त करना सही रुप से जीरो बजट प्राकृतिक खेती है।
- जीरो बजट प्राकृतिक खेती में किसी भी बाहरी संसाधन का प्रयोग नहीं किया जाता बल्कि आपके खेतों एवं घर में उपस्थित सामग्री से ही अच्छा उत्पादन प्राप्त कर अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। उदा.– खट्टी लस्सी का प्रयोग कीटनाशक के रुप में एवं बीजामृत, जीवामृत का प्रयोग पोषक तत्व उपलब्ध करवाने के रुप में कर सकते हैं।
- सुभाष पालेकर के अनुसार जीरो बजट प्राकृतिक खेती के लिए चार मुख्य आवश्यक तत्व (जीवमृत, बीजामृत, वापसा एवं आच्छादन) जो अनिवार्य रुप से मृदा स्वास्थ्य एवं मृदा उर्वरता को बढ़ाने पर केन्द्रित है।
- जीरो बजट प्राकृतिक खेती के अन्तर्गत खेती के साथ–साथ पशुपालन कर आय को दुगुना किया जा सकता है।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती मॉडल:– यह मॉडल बहुफसलों (इन्टरक्रॉपिंग) की खेती पर आधारित है, यानि छोटी और लंबी अवधि की फसलों (मुख्य फसल) को एक साथ उगाना ताकि मुख्य फसल की खेती की लागत छोटी अवधि की फसलों से प्राप्त आय से वसूल हो जाये और परिणामस्वरुप मुख्य फसल पर शून्य खर्च है।
जैसे :– अनाज फसलें (मुख्य फसल) के साथ दलहन फसल को उगाकर आय दुगुनी कर सकते हैं। उदाहरण के लिए गेहूँ एवं चना।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती में प्रयोग किया जाने वाला जीवामृत मृदा में लाभदायक जीवाणुओं की मात्रा को बढ़ाने का कार्य करता है। जो वायुमण्डल में उपस्थित नाइट्रोजन (78 प्रतिशत), का स्थरीकरण कर नाइट्रेट एवं अमोनिया में बदलते हैं। जिसे पौधे पोषक तत्व के रुप में ग्रहण करते हैं।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती के सिद्धान्त :–

1. किसी भी प्रकार के बाहरी इनपुट का प्रयोग नहीं करेंगे।
2. 365 दिन जीवित जड़ वाली फसलों से ढकी रहने वाली मिट्टी होनी चाहिए, इसके लिए आप दलहनी फसलों का प्रयोग कर सकते हैं।
3. मृदा में कम से कम शस्य क्रियायें करें।
4. मिश्रित फसल की बुवाई करें। अनाज वाली फसलों के साथ दलहनी/तिलहनी फसलों की बुवाई कर अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
5. खेतों की मेढ़ पर पेड़ लगायें जो मृदा क्षरण को कम करते हैं। मेढ़ पर फल वृक्ष लगाकर मृदा क्षरण को कम करने के साथ–साथ अधिक लाभ भी प्राप्त किया जा सकता है।
6. देशी बीजों का प्रयोग करें।
7. जल एवं नमी संरक्षण
8. खेती के साथ–साथ पशुपालन, मुर्गीपालन आदि को भी शामिल करें (भारत सरकार ''समन्वित कृषि प्रणाली'' पर जोर दे रही है। जिसमें फलदार बगीचा, बकरी पालन, पशुपालन, मुर्गीपालन आदि को भी खेती के साथ अपनाकर अधिक आय प्राप्त की जा सकती है।
9. मृदा में वर्मीकम्पोस्ट, बीजामृत, केंचुएं आदि मृदा मे कार्बनिक अवशेषों को बढ़ाने का काम करते हैं।
10. नीमास्त्र, दशपर्णी, सोंठास्त्र आदि से खेत में कीटों एवं फफूँदजनक रोगों को नियंत्रित करते हैं।
11. किसी भी प्रकार के संश्लेषित उर्वरक, कीटनाशक, खरपतवारनाशी का प्रयोग नहीं करेंगे क्योंकि यह मृदा में उपस्थित लाभदायक जीवाणु को मार देते हैं। जैसे:– मृदा में उपस्थित केंचुआ (किसान का मित्र) डीएपी के प्रयोग से मर रहे हैं।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती के तत्व:– जीरो बजट प्राकृतिक खेती के प्रर्वता ''सुभाष पालेकर'' है एवं इन्होंने जीरो बजट प्राकृतिक खेती के कुल चार मुख्य अवयव/तत्व बतायें हैं।

1. बीजामृत
2. जीवामृत
3. आच्छांदन/मल्च
4. वापसन/नमी

1. बीजामृत :– बीजामृत का प्रयोग बीजों को बुवाई से पूर्व उपचारित करने के लिए किया जाता है। बीजामृत के निर्माण में प्रयोग होने वाली सामग्री निम्न है–

देशी गाय का गोबर	– 5 किलोग्राम
गौमूत्र	– 5 लीटर
चूना या कली	– 250 ग्राम
पानी	– 20 लीटर
खेत की मिट्टी	– मुट्ठी भर

इन सभी पदार्थों को पानी में घोलकर 24 घंटे तक रखें। दिन में दो बार इसे हिलाना है। इसके बाद बीजों के ऊपर बीजामृत डालकर उन्हें शुद्ध करना है। उसके बाद छाया में सुखाकर बुवाई कर दें। बीजों को उपचारित करने के बाद सात दिनों में उपयोग करें। पौधों की जड़ों को भी बीजामृत से उपचारित कर सकते हैं।

बीजामृत का लाभ :–

- बीजों की अकुरण क्षमता बढ़ती है।
- बीजों की सुशुप्तावस्था जल्दी टूटती है।
- मृदा जनित रोगों से पौधों का बचाव।
- प्रारम्भिक अवस्था से ही मौसमी कीटों और रोगों से बचाव होता है।

2. जीवामृत :– जीवामृत का प्रयोग मृदा में लाभदायक जीवाणुओं की संख्या एवं मृदा गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए किया जाता है। मृदा में उपस्थित लाभदायक जीवाणु पौधों को पोषक तत्व (नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश) और अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व प्रदान करत है। यह मिट्टी में केंचुओं की संख्या बढ़ाते हैं, जिससे भूमि हमेशा उपजाऊ बनी रहती है।

जीवामृत निर्माण में प्रयोग होने वाली सामग्री (एक एकड़ के लिए)

देशी गाय का गोबर – 10 किलोग्राम
गौमूत्र – 10 लीटर
गुड़ – 1–2 किलोग्राम
बेसन –1–2 किलोग्राम
पेड़ के पास की मिट्टी – 500 ग्राम
पानी – 180 लीटर

ध्यान रखें कि जब आप जीवामृत बनाये तो इसमें सीधी धूप यो वर्षा का पानी ना जाए।

इस सामग्री को 200 लीटर का प्लास्टिक का ड्रम लेकर उसमें घोल लें एवं 4–5 फुट का लकड़ी का डण्डे से सामग्री को घड़ी की सूई की दिशा मे 2–3 मिनट तक घोलें। इसके बाद ड्रम को जूट की बोरी से ढक दें। इस तैयार घोल को रोजाना तीन दिन तक सुबह शाम 2–3 मिनट के लिए घड़ी की सुई की दिशा में हिलाना है। छः दिन बाद तैयार जीवामृत को सूती कपड़े से छानकर किसी घड़े या ड्रम में भंडारण करें। यदि इसे ड्रिप या स्प्रिंकलर विधि से प्रयोग करना है तो दो बार छाने।

जीवामृत के लाभ :–

- मृदा में सूक्ष्म जीवों की संख्या में अविश्वसनीय वृद्धि
- मिट्टी को कोमल व उपजाऊ बनाता है।
- मिट्टी की नमी क्षमता में वृद्धि

3. **आच्छादन/मल्चिंग :–** मृदा की ऊपरी सतह को फसल अवशेषों की सहायता से ढका जाता है। मल्च में कवर क्रॉप एवं दलहनी फसलों का प्रयोग कर मृदा में ह्यूमस को बढ़ाने के साथ–साथ मृदा क्षरण को भी कम किया जा सकता है एवं मृदा में पोषक तत्व ताा नमी को बढ़ाया जा सकता है।

लाभ :– यह ह्यूमस उत्पन्न करता है। मृदा की ऊपरी सतह को ढक कर मृदा क्षरण को कम करता है एवं मृदा की जल धारण क्षमता बढ़ाता है। मृदा के लाभदायक जीवों को प्रोत्साहित करता है एवं खरपतवारों को रोकाता है।

4. **वापसम/नमी :–** दोपहर के समय एकांतर नालियों में सिंचाई करें ताकि हवा और पानी के अणु मिट्टी में बने रहे।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती के अन्य तत्व :–

1. **हरी खाद :** मृदा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग मृदा की उर्वरता को कम करता जा रहा है। इसलिए हमें वर्ष में एक बार दलहनी फसलों को लगाकर पौधे की पुष्पन अवस्था पर उसे खेत में पलट देना चाहिए। जिससे मृदा में ह्यूमस एवं मृदा को स्वस्थ बनाया जा सकता है। हरी खाद पौधों को पोषक तत्व भी उपलब्ध करवाती है।

2. **नीमास्त्र :** नीमास्त्र एक प्राकृतिक कीटनाशक है। यह रस चूसने वाले कीट एवं लीफ माइनर के नियंत्रण के लिए प्रभावी कीटनाशक है।

विधि :– 5 किलोग्राम नीम की पत्ती एवं फल को पीस ले एवं 100 लीटर पानी में मिलायें। 5 लीटर पुराना गौमूत्र एवं देशी गाय का ताजा एक किलोग्राम गोबर मिलायें। लकड़ी के डंडे से घोलकर 48 घंटे तक ढ़ककर रखें। दिन में तीन बार घोले एवं 48 घंटे बाद कपड़े से छान लें।

3. **ब्रह्मास्त्र :–** कीट, बड़ी सुन्डियों व इल्लियों के लिए।

विधि :– 10 लीटर गौमूत्र लें। उसमें 3 किलोग्राम नीम के पत्ते पीसकर डालें तथा उसमें 2 किलोग्राम करंज के पत्ते डाले। यदि करंज के पत्ते न मिले तो 3 किलोग्राम की जगह 5 किलोग्राम नीम के पत्ते डालें। उसमें 2 किलोग्राम सीताफल के पत्ते तथा 2 किलोग्राम सफेद धतूरे के पत्ते भी पीसकर डालें।

इसमें अमरुद, अरण्डी और पपीते के भी 2–2 किलोग्राम पत्ते ले सकते हैं। अब इस सारे मिश्रण को गौमूत्र में घोलें और ढक कर उबालें। 3–4 उबाल आने के बाद उसे आग से नीचे उतार लें। 48 घंटे तक उसे ठण्डा होने दे।

आवश्यक सामग्री

गौमूत्र –10 लीटर
नीम के पत्ते पीसकर –5 किलोग्राम
सफेद धतूरे के पत्ते पीसकर – 2 किलोग्राम
सीताफल के पत्ते पीसकर – 2 किलोग्राम
करंज के पत्ते – 2 किलोग्राम
अमरुद के पत्ते – 2 किलोग्राम
अरण्डी के पत्ते – 2 किलोग्राम
पपीते के पत्ते – 2 किलोग्राम

100 लीटर पानी में 2–2.5 लीटर मिलाकर फसल पर छिड़काव करें। इसे छः माह तक रख सकते हैं।

4. **अग्नि अस्त्र :–** पेड़ के तनों या डंठलों में रहने वाले कीड़े, फलियों में रहने वाली सुंडियों, फलों में रहने वाली सुंडियों, कपास के टिण्डों में रहने वाली सुंडियों तथा सभी प्रकार की बड़ी सुंडियों व इल्लियों के लिए।

विधि :– 10 लीटर गौमूत्र, 500 ग्राम हरी मिर्च, 500 ग्राम लहसून, 1 किलोग्राम तम्बाकू पाउडर एवं 5 किलोग्राम नीम के पत्ते पीसकर डालें तथा लकड़ी के डंडे से घोलें और उसे एक बर्तन में उबालें। 4–5 उबाल आने पर उतार लें। 48 घंटों तक उसे ठण्डा होने दें। 48 घंटे बाद उस घोल को कपड़े से छानकर एक बरतन में रखें।

आवश्यक सामग्री –

गौमूत्र – 10 लीटर
तीखी हरी मिर्च पीसकर – 500 ग्राम
लहसून पीसकर – 500 ग्राम
नीम के पत्ते पीसकर – 5 किलोग्राम
तम्बाकू खाने वाले – 1 किलोग्राम

100 लीटर पानी में 2–2.5 लीटर मिलाकर फसल पर छिड़काव करें।

5. **दशपर्णी अर्क :–** सभी प्रकार के रस चूषक कीट और इल्लियों के नियंत्रण के लिए।

आवश्यक सामग्री –

पानी – 40 लीटर
देशी गाय का मूत्र –4 लीटर
देशी गाय का ताजा गोबर –400 ग्राम
हल्दी पाउडर – 100 ग्राम
अदरक की चटनी –100 ग्राम
हींग पाउडर – 1 चुटकी
तम्बाकू पाउडर – 200 ग्राम
तीखी हरी मिर्च की चटनी – 200 ग्राम
देशी लहसून की चटनी – 100 ग्राम

अब इस घोल को लकड़ी के डंडे से 2–3 मिनट के लिए घड़ी की सूई की दिशा में घोलें। फिर जूट की बोरी से अगले दिन (24 घंटे बाद) तक ढक कर रख दें। अगले दिन नीचे लिखे गये पौधों के पत्ते पीसकर डाल दें।

नीम – 400 ग्राम
करंज – 400 ग्राम
अरंड – 400 ग्राम
सीताफल – 400 ग्राम
बेल – 400 ग्राम
गेंदा – 400 ग्राम
तुलसी – 400 ग्राम
आम – 400 ग्राम
आंक –400 ग्राम
धतूरा –400 ग्राम

इन पत्तों को घोल में डालने के बाद घोलक को घड़ी की सुई के समान हिलायें एवं 40 दिन तक क्रियान्वयन क्रिया पूरी हो जायेगी। इसके बाद इस घोल को कपड़े से छान लें।

एक लीटर दशपर्णी अर्क को 40 लीटर पानी में मिलाते हैं एवं एक बीघा खेत में छिड़क देते हैं। दशपर्णी अर्क को 6 माह तक भण्डारित करके रखा जा सकता है।

वर्मीबेड से केंचुआ खाद व केंचुए को अलग करने की आसान विधियाँ

श्रवण कुमार यादव, शांति कुमार शर्मा, भवानी शंकर मीणा एवं सत्यनारायण मीणा
कृषि अनुसंधान केंद्र, उम्मेदगंज, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा, सहायक महानिदेशक (मानव संसाधन प्रबंधन), भा.कृ.अनु.प., नई दिल्ली

जैविक खेती आज के समय की प्रमुख मांग है, जिसका मुख्य कारण बढ़ते रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग से होने वाला स्वास्थ्य और पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव है। उपभोक्ता अब सुरक्षित, पौष्टिक और नैतिक रूप से उत्पादित भोजन की तलाश में हैं, जिससे जैविक उत्पादों की मांग बढ़ रही है।

केंचुआ खाद जैविक खेती में काम आने वाली खादों में सबसे प्रमुख खाद होती है, जिसको बनाना बहुत आसान है लेकिन जब खाद तैयार हो जाती है तब तैयार खाद में से केंचुओं को अलग करना एक मुश्किल कार्य है। लेकिन कुछ विधियां ऐसी है जिनको किसान भाई अपनाकर आसानी से तैयार केंचुआ खाद में से केंचुएं को अलग कर सकते है। केंचुए को केंचुआ खाद से अलग करने की बहुत सारी विधियाँ है ये विधियाँ कई कारकों पर निर्भर हैं, जैसे कि केंचुआ खाद की इकाई कितनी बड़ी है और केंचुएं को आपको कब अलग करना है।

केंचुएं को अलग करने की अनेक विधियाँ मे से आसान विधियों का वर्णन नीचे किया जा रहा है।

धूप में ढेरी बनाकर : तैयार वर्मीकम्पोस्ट बेड में से केंचुआ खाद को, जिसमे केंचुए भी होते है, निकाल कर धूप में छोटी छोटी ढेरियाँ बना देते हैं। प्रकाश के प्रति केंचुओं की संवेदनशीलता, उन्हें ढेरी के ऊपर से पेंदे में ले जाने के लिए प्रेरित करती है। जैसे ही सूर्य की किरणें इन ढेरियों पर पड़ती हैं, केंचुए ढेरी में नीचे पेंदे की तरफ चले जाते हैं। अब ऊपर से तेयार केंचुआ खाद की परत को अलग कर लेते हैं। फिर दोबारा जब सूर्य की किरणें वर्मीकम्पोस्ट की ढेरी पर पड़ती हैं तो केंचुए पूनः ढेरी में नीचे की तरफ चले जाते हैं एवं ऊपर से केंचुआ खाद की परत को पुनः अलग कर लेते हैं। इस प्रक्रिया को बार बार दोहराने के उपरान्त अंत में एक ढेरी के पेंदे में सिर्फ केंचुए रह जाते हैं।

चित्र 1 : धूप में ढेरी बनाकर केंचुएं को केंचुआ खाद से अलग करने की विधि

ताजा गोबर को गोल गेंदनुमा बनाकर केंचुआ खाद की बेड में गड्ढे खोदकर रखना: केंचुआ खाद की बेड में छोटे छोटे गड्ढे बनाकर उसमे कच्चे गोबर के गेंदनुमा गोले डालते हैं जिससे 1 से 2 दिन में सभी केंचुए वर्मीबेड से कच्चे गोबर के गोलों में आ जाते हैं। अब इन कच्चे गोबर के गोलों को, जिनमे केंचुए आ गये हैं, बेड से निकाल कर वर्मीवाश तथा नयी वर्मी कम्पोस्ट बेड बनाने में काम में ले लेते हैं।

ताजा गोबर को गोल गेंदनुमा बनाकर गड्ढो में डाल कर केंचुएं को अलग करना

केंचुआ खाद की तैयार बेड में पानी का छिडकाव बंद करके : जब वर्मीकम्पोस्ट बेड में खाद का तैयार हो जाए, तब पानी का छिड़काव बंद कर देना चाहिए। जिससे धीरे–धीरे बेड ऊपर से सूखने लगती है जिससे केंचऐ, नीचे की ओर नमी की तरफ गमन करते हैं और ऊपर केवल केंचुआ खाद शेष रह जाती है जिसे वहाँ से परत दर परत हटा लिया जाता है। तह में बचे हुए केंचुओं को निकाल कर वर्मीवाश तथा नयी वर्मीकम्पोस्ट बेड बनाने में दुबारा काम में ले लेते हैं।

केंचुआ खाद की तैयार बेड में पानी का छिडकाव बंद करके केंचुएं को अलग करने की विधि।

छलनी विधि : वर्मीकम्पोस्ट की छनाई की यह विधि दिन के किसी भी समय की जा सकती है। इस विधि में केंचुएं को केंचुआ खाद से अलग करने के लिए छनाई मशीन अथवा हाथ वाली छलनी का उपयोग किया जाता है। बेड से खाद को लेकर छलनी में डाल देते और छलनी को हिलाते है जिससे बारीक केंचुआ खाद छलनी से छन कर निचे इकठा हो जाता है एवं अन अपघटित पदार्थ तथा केंचुएं छलनी के ऊपर रह जाते है। छलनी के ऊपर से केंचुएं को हाथों से अलग कर लिया जाता है। इस विधि कमी यह है की इस विधि से केंचुओं की मृत्यु दर बहुत अधिक होती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि छलनी प्रक्रिया के दौरान केंचुएं के कोमल शरीर को यांत्रिक चोट लगती है।

वर्मीकम्पोस्ट से केंचुएं को अलग करने की छलनी विधि।

केंचुएं का ताजे गोबर की नई बेड में प्रवास विधि : केंचुआ खाद तैयार होने के बाद केंचुओं को अलग करने के लिए तैयार बेड के समीप ही ताजे गोबर की एक नई बेड बनाते हैं जिससे 5 से 10 दिन में सभी केंचुए भोजन की तलाश में ताजे गोबर की बेड में प्रवेश कर जाते हैं। केंचुओं के नई बेड में जाने के बाद पुरानी बेड से तैयार खाद को इकट्ठा कर लिया जाता हैं । इस विधि में केंचुओ को यांत्रिक चोट नहीं लगती हैं एवं खाद से केंचुए अलग करने की लागत भी कम आती हैं ।

तैयार वर्मीकम्पोस्ट की बैड के पास नयी गोबर की बैड बना कर केंचुएं को अलग करना ।

खरपतवार प्रबंधन में आधुनिक तकनीकें ए आई एवं नवाचार

मोहन लाल जाट, भागचन्द धायल, सत्यनारायण मीणा एवं राजेश शर्मा
कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, कृषि अनुसंधान केन्द्र,कोटा एवं कृषि यांत्रिकी फार्म, कोटा

खरपतवार फसल उत्पादन और खाद्य सुरक्षा में होने वाली सबसे बड़ी बाधाओं मे से एक है जिसके कारण फसल उत्पादन में लगभग 15–80 प्रतिशत तक कमी आ सकती है। ये फसलीय पौधो से जल, पोषक तत्व, प्रकाश ओर स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करत हैं। इनका पारंपरिक नियंत्रण जैसे जुताई, निराई–गुडाई ओर रासायनिक खरपतवारनाशी मुख्य आधार रहा है, किंतु श्रम–अभाव, लागत, पर्यावरण/मानव स्वास्थय चिंताएं और शाकनाशी–प्रतिरोध ने स्थायी, समेकित और तकनीक–सहयोगी दृष्टिकोण की आवश्यकता को रेखांकित किया है। इस लेख मे खरपतार नियंत्रण हेतु आवरण फसलें, एलेलोपैथी, मृदा सौरीकरण, आच्छादन, फ्लेम वीडिंग, मशीनी/रोबोटिक निराई, ड्रोन–आधारित छिडकाव, स्थान–विशिष्ट खरपतवार प्रबंधन, कंप्यूटर विजन, आर्टिफिश्यिल इंटेलिजेंस, मशीन लर्निंग, मल्टीस्पेक्ट्रल/हाइपरस्पेक्ट्रल रिमोट सेंसिग, निर्णय सहयोग प्रणाली और भविष्य की दिशा जैसे जीन–संशोधित/शाकनाशी सहिष्णु फसले, इलेक्ट्रिक/लेजर वीडिंग तक के नए आयामों का व्यवहारिक एवं समालोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

खरपतवार क्या हैं ?

खरपतवार वे पौधे हैं जो मनुष्य की इच्छा के विपरीत खेती की भूमि, फसल अथवा संसाधन क्षेत्रों में उगकर उत्पादन, पर्यावरण एवं खेती–व्यवस्था को हानि पहुँचाते हैं। ये फसलों के उत्पादन में 15–80 प्रतिशत तक की कमी के साथ–साथ गुणवत्ता, कीमत तथा कटाई प्रक्रिया को भी प्रभावित करते हैं। खरपतवार कीट और रोगों के पोषक–स्रोत के रूप में भी काम करते हैं तथा सिंचाई और नमी प्रबंधन को बाधित करते हैं। खेत की भौगोलिक विविधता, छोटे खेत, सीमित संसाधन, मौसम एवं श्रम की उपलब्धता जैसी चुनौतियाँ इनके प्रभाव को और बढ़ा देती हैं।

खरपतवार प्रबंधन की परंपरागत विधियाँ

जुताई आधारित तकनीकें

फसल बोने से पहले मिट्टी की गहरी एवं हल्की जुताई की जाती है जिससे खरपतवार के बीज नष्ट हो जाते हैं। इसके बाद उपयुक्त समय पर हल्की जुताई से खरपतवारों को उखाड़कर नष्ट किया जाता है। अनियंत्रित जुताई से मिट्टी का क्षरण एवं प्रकाश उपलब्धता कम होने से खरपतवार वृद्धि बढ़ सकती है। संरक्षण जुताई में अवशेष–संरक्षण, आवरण फसलें और न्यूनतम जुताई तकनीकों का प्रयोग होता है। फसल के अवशेष और आवरण फसले मृदा की सतह को ढककर प्रकाश की उपलब्धता कम करती है, जिससे खरपतवारों का अंकुरण और विकास दब जाता हैं।

स्टेल–सीडबेड तकनीक

इस तकनीक में खेत की तैयारी के बाद हल्की सिंचाई की जाती है, जिससे खरपतवार बीज अंकुरित हो जाते हैं। इसके बाद गहरी/उथली जुताई या उपयुक्त शाकनाशी छिड़क कर नष्ट कर दिया जाता है।

फसलचक्र, अंतर फसल प्रणाली और जल प्रबधन

फसल चक्र में विभिन्न मौसम और पौधो की प्रकृति के अनुसार फसलों को क्रमवार उगाया जाता है। फसल बदलने से विशिष्ट खरपतवारों का जीवन चक्र टूटता है। अंतर–फसल प्रणाली से भूमि ढक जाती है, जिससे खरपतवारों को प्रकाश नहीं मिलता। जैसे, गन्ने मे दालों की अतंर फसल प्रणाली खरपतवार को दबाती है और अतिरिक्त नाइट्रोजन भी प्रदान करती है। जल–प्रबंधन, जैसे फसलों में नियोजित सिंचाई कुछ खरपतवारों की वृद्धि कम कर सकती है। धान भी खेती में पानी–भराव तकनीक से एरॉबिक खरपतवारों (जैसे इकाइनोक्लोआ) का विकास रूक जाता है।

रोपाई/बीजाई विधियां, दूरी, मल्चिगं और यांत्रिकीकरण

उचित दूरी पर रोपण से पौधों को मजबूत बढ़त मिलती है और खरपतवारों को स्थान नहीं मिलता। जैविक मल्चिंग या प्लास्टिक मल्चिंग से प्रकाश अवरुद्ध होने से खरपतवार अंकुरण कम होता है। यांत्रिक यंत्र जैसे लाइन–वीडर और कोना–वीडर धान, गन्ना और अन्य पंक्ति फसलों में खरपतवार नियंत्रण हेतु प्रभावी है।

रासांयनिक प्रबधंन

लगातार एक ही प्रकार का शाकनाशी प्रयोग करनें से प्रतिरोध विकसित हो सकता है इसलिए शाकनाशी के क्रिया तंत्र का सही चयन और चक्र आवश्यक है, ताकि प्रतिरोध की समस्या कम हो। शाकनाशी का सही समय पर प्रयोग में उद्भव पूर्व : शाकनाशी बीज अंकुरण से पहले मृदा पर डाले जाते है, जिससे अकुंरित होते ही खरपतवार मर जाते है एवं उद्भव पश्चात् : शाकनाशी सक्रिय अवस्था में उगें खरपतवारो पर छिडके जाते है। उचित नोजल का चयन, दाब का सतुंलन और घोल का सही सांद्रता सुनि िचत करती है कि दवा केवल लक्षित पौधो तक पहुचें। इसके साथ ही पी.पी.ई. द्धव्यक्तिगत सुरक्षा उपकरणऋ का उपयोग किसान की सुरक्षा के लिए अनिवार्य है।

जैविक और पारिस्थितिक उपाय एलेलोपैथी और आवरण फसलें

कुछ पौधो की जड़े और अवशेष विशेष रसायन (एलेलोपैथी रसायन) छोडतें है, जो अन्य खरपतवारो के अंकुरण को रोकते है। जैसे सूरजमुखी, तिल इत्यादि।

आवरण फसलें

सनई, ढैचां या तिलहन फसलें मृदा की सतह ढककर खरपतवार बीजों को अंकुरण से रोकती हैं और साथ ही मृदा उर्वरता बढाती हैं।

मृदा सौरीकरण

मृदा को पारदर्शी प्लास्टिक शीट से ढककर कुछ सप्ताह तक सूर्य की गर्मी के संपर्क में रखा जाता है। इससे मृदा का तापमान 45–60 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ जाता है, जिससे खरपतवार बीज, कीट और रोगजनक मर जाते हैं।

मल्च और स्ट्रिप–टिल

मल्चिंग प्रकाश को अवरूद्ध कर खरपतवारों के अकुंरण को कम करता है और स्ट्रिप–टिल विधि में केवल फसल पंक्ति में जुताई होती हैं, जिससे बीच की जगह ढकी रहती है और खरपतवारो का दबाव घटता हैं।

फ्लेम वीडिंग

फ्लेम वीडिंग में प्रोपेन गैस फ्लेमर से खरपतवारों को ऊष्मा देकर नष्ट किया जाता हैं। इससे पौधों की कोशिकाएं फट जाती हैं और व सूखकर मर जाती हैं।

समेकित खरपतवार प्रबंधन

समेकित खरपतवार प्रबंधन में निम्न क्रियाएं हैं :

- **रोकथाम :** स्वच्छ बीज, खरपतवारमुक्त खेत और उपकरणों की सफाई।
- **निगरानी :** खेत में खरपतवारों की पहचान, घनत्व की गणना और समय–समय पर निरीक्षण।
- **पारंपरिक–उपाय :** फसलचक्र, इंटरक्रॉपिगं, आवरण फसलें।
- **यांत्रिक–उपाय :** लाइन–वीडर, कोनो–वीडर, रोटरी–वीडर, आदि।
- **रासायनिक उपाय :** शाकनाशी का सही चयन और क्रिया–तंत्र रोटेशन।
- **जैविक उपाय :** एलेलोपैथी और जैव–एजेंट (जैसे कीट या रोगजनक जो खरपतावार पर हमला करते हैं।

स्मार्ट एवं नई तकनीकें

खरपतावार प्रबधंन के क्षेत्र में नए आयाम पांरपरिक तरीकों से कही अधिक प्रभावी और पर्यावरण के प्रति सवेदंनशील हैं। इन नए आयामों में नए शाकनाशी, डिजिटल तकनीकी उपकरणों, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, मशीन लर्निंग, ड्रोन, स्मार्ट स्प्रेयर, रोबोटिक्स और रिमोट सेंसिग जैसे अत्याधुनिक उपकरणों का होता हैं।

नए शाकनाशी

नए शाकनाशी केवल लक्षित खरपतवारों को ही प्रभावित करते हैं, जिससे फसलों और अन्य उपयोगी पौधों पर कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं पडता है। इन शाकनाशियों की जैविक घुलनशीलता और रासायनिक स्थिरता बेहतर होती है, जो भूमि और जल स्त्रोतो को प्रदूषित करने के जोखिम को कम करती हैं।

सारणी : विभिन्न फसलों में प्रयोग होने वाले शाकनाशी की खुराक एवं व्यावसायिक मात्रा

फसल	प्रयोग विधि	शाकनाशी एवं सादता	खुराक (ग्राम/हैक्टर)	मात्रा (ग्राम/हैक्टर)
गेंहू	बुवाई पूर्व	पेण्डीमेथिलीन 30 प्रतिशत ईसी	1000–1500	3300–5000
		पाइरोक्सासल्फोन 85 प्रतिशत डब्लयूजी	127.5	150
		पेण्डीमेथिलीन 40 प्रतिशत +मेट्रिब्यूजिन 8 प्रतिशत ईसी	1000+200	2500
	बुवाई पश्चात्	मेटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 प्रतिशत डब्ल्यूजी/डब्ल्यूजी	4	20
		पिनॉक्साडेन 5.1 प्रतिशत ईसी	40–45	800–900
		मेट्रिब्यूजिन 70 प्रतिशत डब्ल्यूपी	175–210	250–300
		कारफेंट्राजोन एथाइल 40 प्रतिशत डीएफ	20	50
		कारफेंट्राजोन 20 प्रतिशत+सल्फोसल्फरॉन 25 प्रतिशत डब्ल्यूजी	20+25	100
		मेटसल्फरॉन मिथाइल 10 प्रतिशत + कारफेंट्राजोन एथाइल 40 प्रतिशत डीएफ	25	50
		मेसोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 3 प्रतिशत्+आयोडोसल्फ्यूरॉन मिथाइल सोडियम 0.6 प्रतिशत डब्ल्यूपी	12+2.4	400
		सल्फोसल्फ्यूरॉन 75 प्रतिशत + मेटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 5 प्रतिशत डब्ल्यूजी	30+2	40
		क्लोडिनाफॉप प्रोपारजाइल 15 प्रतिशत + प्रतिशत+मेटसल्फरॉन मिथाइल 1 प्रतिशत डब्ल्यूपी	60+4	400
		मेट्रिब्यूजिन 20 प्रतिशत +. क्लोडिनाफॉप प्रोपारजाइल 9 प्रतिशत डब्ल्यूपी	120+54	600
		मेट्रिब्यूजिन 42 प्रतिशत + क्लोडिनाफॉप प्रोपारजाइल 12 प्रतिशत डब्ल्यूपी	210+60	500
		हेलॉक्सिफेन मिथाइल 20.8 प्रतिशत + फ्लोरासुलाम 20 प्रतिशत डब्ल्यूपी	12.76	31.23
		2,4–डी सोडियम साल्ट 50 प्रतिशत + मेट्रिब्यूजिन 15 प्रतिशत डब्ल्यूपी	400+120	800
		पेण्डीमेथिलीन 30 प्रति ात + इमाजेथापायर 2 प्रतिशत ईसी	960	3000
		सल्फेंट्राजेन 28 प्रतिशत + क्लोमाजोन 30 प्रतिशत डब्लयूजी	725	1250
		डाइक्ललोसुलाम 0.9 प्रतिशत+पेण्डीमेथिलीन 35 प्रतिशत एसई	22.5+875	2500
	बुवाई पश्चात्	फोसेसाफेन 12 प्रतिशत +क्विजालोफॉप–एथाइल 3 प्रतिशत एससी	180+45	1500
		फ्लूएजिफॉप–पी–ब्यूटाइल 11.1 प्रतिशत+फोमेसाफेन 11.1 प्रतिशत एसएल	250	1000
		फ्लूथियासेट–मेथाइल 2.5 प्रतिशत+क्विजाफॉप–एथाइल 10 प्रतिशत ईसी	12.5+50	500
		फोमेसाफेन 12.5 प्रतिशत +फेनॉक्साप्रॉप–पी–एथाइल 10 प्रतिशत + क्लोरीम्यूरॉन–एथाइल 0.9 प्रतिशत एमई	125+100+9	1000
		प्रोपाक्विजाफॉप 2.5 प्रतिशत+इमाजेथापायर 3.75 प्रतिशत एमई	125	2000
		क्विजालोफॉप–एथाइल 7.5 प्रतिशत+इमाजेथापायर 15 प्रतिशत ईसी	32.5+65.6	437.5
मूंगफली एवं उड़द	बुवाई पूर्व	पेण्डीमेथिलीन 30 प्रतिशत + इमाजेथापायर 2 प्रतिशत ईसी	960	3000
	बुवाई पश्चात्	प्रोपाक्विजाफॉप 2.5 प्रतिशत+इमाजेथापायर 3.75 प्रतिशत एमई	125	2000
		फोसेसाफेन 17.5 प्रतिशत +क्लोडिनाफॉप प्रोपारजिल 12.5 प्रतिशत एमई	175+125	1000
		फोसेसाफेन 16.8 प्रतिशत +प्रोपाक्विजाफॉप 5.2 प्रतिशत एमई	210+65	1250
		इमाजेथापायर 10 प्रतिशत एसएल	75	1000
अरहर	बुवाई पूर्व	पेण्डीमेथिलीन 30 प्रतिशत + इमाजेथापायर 2 प्रतिशत ईसी	960	3000
	बुवाई पश्चात्	प्रोपाक्विजाफॉप 2.5 प्रतिशत+इमाजेथापायर 3.75 प्रतिशत एमई	125	2000

फसल	प्रयोग विधि	शाकनाशी एवं सादृता	खुराक (ग्राम/हैक्टर)	मात्रा (ग्राम/हैक्टर)
		क्विजालोफॉप–एथाइल 7.5 प्रतिशत+इमाजेथापायर 15 प्रतिशत ईसी	32.5+65.6	437.5
गन्ना	बुवाई पूर्व	एट्राजीन 50 प्रतिशत डब्ल्यूपी	500–2000	1000–4000
		एट्राजीन 80 प्रतिशत डब्ल्यूजी	2000	2500
		मेट्रिब्यूजिन 70 प्रतिशत डब्ल्यूजी	1050–2000	1500–2000
		सल्फेंट्राजोन 28 प्रतिशत + क्लोमाजोंन 30 प्रतिशत डब्ल्यूपी	350+375	1250
	बुवाई पश्चात्	हैलोसल्फ्यूरॉन मेथाइल 75 प्रतिशत डब्ल्यूजी	67.5	90
		हैलोसल्फ्यूरॉन मेथाइल 12 प्रतिशत + मेट्रिब्यूजिन 55 प्रतिशत डब्ल्यूजी	54+247.5	450
		मेसोट्रियोन 2.27 प्रतिशत + एट्राजीन 22.7 प्रतिशत	875	3500
		टोप्रामेजोन 1 प्रतिशत + एट्राजीन 30 प्रतिशत एससी	930	3000
कपास	बुवाई पूर्व	पायरीथियोबैंक सोडियम 3.1 प्रतिशत + पेण्डीमेथिलीन 34 प्रतिशत जैडसी	650	1750
	बुवाई पश्चात्	पायरीथियोबैंक सोडियम 6 प्रतिशत + क्विजालोफॉप एथाइल 4 प्रतिशत ईसी	125	1250
		पायरीथियोबैंक सोडियम 10 प्रतिशत ईसी	62.5	625

ड्रोन और सैटेलाइट आधारित : ड्रोन और सैटेलाइट आधारित निगरानी ने कृषि क्षेत्र में एक नई क्रांति का सूत्रापातकिया हैं। इन उपकरणों का उपयोग बहुत कम समय में व्यापक क्षेत्रों पर निगरानी रखने में मदद करता है।

ड्रोन आधारित रिमोट सेंसिग :
- ड्रोन बहुत कम समय में बड़े क्षेत्र पर छिड़काव कर सकते हैं।
- मल्टीस्पेक्ट्रल तथा हाइपरस्पेक्ट्रल कैमरों की सहायता से
- खरपतवार की पहचान
- खरपतवार घनत्व का मानचित्र
- स्थान –विशिष्ट खरपतवार प्रबंधन

स्थान : विशिष्ट खरपतवार प्रबंधन से खेत के विभिन्न हिस्सों में खरपतवारों की उपस्थिति और घनत्व के अनुसार शाकनाशी और अन्य नियंत्रक उपायों का चयन किया जाता हैं।

मल्टीस्पेक्ट्रल और हाइपरस्पेक्ट्रल इमेंजिग
- मल्टीस्पेक्ट्रल इमेंजिग के माध्यम से खेत के विभिन्न हिस्सों की विभिन्न तरंगदैर्ध्य पर निगरानी की जाती है, जिससे मुख्य रूप से शाकनाशी, नमी स्तर और प्रकाश की स्थिति का विशलेषण करती है, जिससे खरपतवारों की पहचान सटीक होती है।
- हाइपरस्पेक्ट्रल सेंसिग तकनीक फसल और खरपतवार के बीच अतर को पहचानने में बेहद सक्षम है। इससे शाकनाशी का छिडकाव केवल उन क्षेत्रों में किया जा सकता है, जहां खरपतवार होतें है।

वेरिएबल रेट टेक्नोलॉजी
- वेरएबल रेट टेक्नोलॉजी का उपयोग करते हुए खरपतवारों के घनत्व के अनुसार शाकनाशी की मात्रा की नियंत्रित किया जाता है।
- इसके अलावा, वेरिएबल रेट स्प्रेंइग सिस्टम ड्रोन या अन्य मशीनों पर लागू किया जा सकता है, जिससे शाकनाशी का छिडकाव केवल उन क्षेत्रों में किया जाता है, जहां खरपतवारों की समस्या होती है।

लाभ
- शाकनाशी की खपत में कमी और खर्च में कटौती।
- केवल लक्षित क्षेत्रों में शाकनाशी का उपयो होने से पर्यावरणीय प्रभाव घटता है।
- फसल एवं खरपतवार भेद किया जा सकता है।
- इससे शाकनाशी की मात्रा कम लगती है और सटीकता बढ़ती है।

सैटेलाइट इमेंजरी

सैटेलाइट के माध्यम से बडें भूभाग पर निगरानी की जाती हैं और खरपतवारों के फेलाव का विस्तृत डेटा प्रदान करती हैं।

लाभ
- बड़े क्षेत्रों पर निगरानी संभव होती हैं।
- ड्रोन और सैटेलाइट की मदद से कम समय में अधिक डेटा एकत्र किया जाता हैं।

रोबोटिक्स और इलेक्ट्रिक/लेजर वीडिगं

रोबोटिक्स और लेजर वीडिंग तकनीकों से अब रासायनिक शाकनाशी के बिना खरपतवारों का प्रभावी और सटीक नियंत्रण सभंव हैं।

रोबोटिक प्लेटफॉर्म : रोबोटिक प्लेटफॉर्म्सें, जो आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और कंप्यूटर विजन से सुसज्जित होते हैं। खेतों मे खरपतवारों की पहचान कर, यांत्रिक विधियों से उन्हे नष्ट करतें हैं।

लेजर वीडिंग : इसमें लेजर बीम उपयोग खरपतवारों को जलाने के लिए किया जाता हैं। यह एक पूरी तरह से रसायनरहित तकनीक है।

लाभ
- हर्बिसाइड की आवश्यकता नहीं
- कम ऊर्जा खर्च
- न्यूनतम पर्यावरणीय प्रभाव

ड्रोन, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, मशीन लर्निंग, रोबोटिक्स और स्मार्ट स्प्रेयर जैसी तकनीकों का उपयोग खरपवारो के नियंत्रण को अधिक सटीक, प्रभाव और पर्यावरणीय रूप से सवंदेनशील बनाता है। समेकित खरपतवार प्रबंधन और डेटा–संचालित नीतियां फसलों की सुरक्षा और कृषि उत्पादकता बढाने में अहम भूमिका निभा सकते हैं।

स्थान–विशिष्ट खरपतवार प्रबंधन : स्थान–विशिष्ट खरपतवार प्रबंधन से खेत के विभिन्न हिस्सों में खरपतवारों की उपस्थिति और घनत्व के अनुसार शाकनाशी और अन्य नियंत्रक उपायों का चयन किया जाता हैं।

मल्टीस्पेक्ट्रल और हाइपरस्पेक्ट्रल इमेंजिग : मल्टीस्पेक्ट्रल इमेंजिग के माध्यम से खेत के विभिन्न हिस्सों की विभिन्न तरंगदैर्ध्य पर निगरानी की जाती है, जिससे मुख्य रूप से शाकनाशी, नमी स्तर और प्रकाश की स्थिति का विशलेषण करती है, जिससे खरपतवारों की पहचान सटीक होती है। हाइपरस्पेक्ट्रल सेंसिग तकनीक फसल और खरपतवार के बीच अतर को पहचानने में बेहद सक्षम है। इससे शाकनाशी का छिडकाव केवल उन क्षेत्रों में किया जा सकता है, जहां खरपतवार होतें है।

वेरिएबल रेट टेक्नोलॉजी : वेरएबल रेट टेक्नोलॉजी का उपयोग करते हुए खरपतवारों के घनत्व के अनुसार शाकनाशी की मात्रा की नियंत्रित किया जाता है। इसकें अलावा, वेरिएबल रेट स्प्रेंइग सिस्टम ड्रोन या अन्य मशीनों पर लागू किया जा सकता है, जिससे शाकनाशी का छिडकाव केवल उन क्षेत्रों में किया जाता है, जहां खरपतवारों की समस्या होती है।

लाभ : शाकनाशी की खपत में कमी और खर्च में कटौती। केवल लक्षित क्षेत्रों में शाकनाशी का उपयो होने से पर्यावरणीय प्रभाव घटता है।

❋❋❋

शहद से समृद्धि तक : किसानों के लिए मधुमक्खी पालन एक सुनहरा अवसर

कैलाश चन्द्र अहीर एवं राजेन्द्र गोचर
कृषि अनुसंधान उपकेन्द्र, अकलेरा, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

मानव मधुमक्खियॉ से मिलने वाले स्वादिष्ट, मीठे तथा पोषक तत्वो युक्त शहद के महत्व को पहले से जानता था। शहद का वर्णन रामायण, महाभारत, उपनिषेद, पुराण तथा वेदों मे मिलता है। प्राचीन काल से शहद का उपयोग धार्मिक रीति–रिवाजों के लिये किया जाता था। सुश्रुत द्वारा रचित सुश्रुत संहिता में शहद के आयुर्वेद मे उपयोग के बारे मे बताया गया है। शहद के अलावा मधुमक्खी से मोम, रॉयल जैली, बी वेनम भी प्राप्त होता है एवं फसलो के परागण में सहायक होती है, जिससे फसल उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। मधुमक्खी पालन कृषि से जुड़ा एक ऐसा व्यवसाय है, जो कम लागत एवं अधिक मुनाफे वाला है, जिसमें कम मेहनत एवं कम लागत में आसानी से शुरू किया जा सकता है। मधुमक्खी पालन किसानों एवं ग्रामीण बेरोजगार युवाओं के लिये आय का महत्वपूर्ण एवं लाभदायक व्यवसाय है। इस प्रकार मधुमक्खी पालन जैविक कृषि, पर्यावरण संरक्षण और आर्थिक उन्नति तीनो को साथ लेकर चलने वाला एक टिकाऊ एवं आकर्षक आय का साधन बन चुका है।

मधुमक्खी कॉलोनी : मधुमक्खी की एक कॉलोनी मे लगभग 20,000 से 30,000 मधुमक्खियॉ होती है, जिनमे एक रानी, कुछ सौ नर तथा लगभग 90 प्रतिशत श्रमिक होते है। कॉलोनी मे रानी कार्यात्मक रूप से परिपक्व मादा होती है। यह श्रमिक से आकार मे बड़ी होती है। मादा मे मोम प्लेट तथा पराग थैली नहीं होती है। रानी मे विशिष्ट अण्ड़रोपक होता है, जो डंक का भी कार्य करता है। रानी का मुख्य कार्य प्रजनन करना तथा कॉलोनी की मजबूती बनाये रखना है। रानी मैथुन उड़ान के दौरान नर से मैथुन क्रिया करती तथा बाद मे छतें मे आकर जीवनभर अण्ड़े देती है। श्रमिक अपूर्ण रूप से विकसित मादा होती है तथा यह तीन जातियों मे से सबसे छोटी होती है। श्रमिक कॉलोनी के एकमात्र ऐसे सदस्य है जो निस्वार्थ भाव से अपना पूरा समय तथा ध्यान कॉलोनी की सेवा करने मे लगाते है। नवजात श्रमिक छते का निर्माण, छते को गर्म रखना, छते को स्वच्छ रखना, कॉलोनी को शत्रुओं से बचाना, रानी की सेवा करना आदि कार्य करते है। अधिक आयु के अनुभवी श्रमिक भोजन के लिये जाते है, जो मधु, पराग तथा प्रोपोलिस एकत्रित कर लाते है। इनमे सरंचनात्मक रूप से इन कार्यो के लिये अनुकूलतायें पायी जाती है। कम आयु मे श्रमिक कॉलोनी के अन्दर तथा अधिक आयु पर कॉलोनी के बाहर भोजन के कार्य का निष्पादन करते है, जो यह दर्शाता है कि इनमें श्रम विभाजन तथा निश्चित आयु पर विशिष्ट कार्यो को करते है। नर सामान्यतया श्रमिक से आकार मे बड़ा तथा गहरे रंग का होता है। इसके संयुक्त नेत्र श्रमिक से बड़े होते तथा ये सिर के शीर्ष पर होती है। नर मे डंक, मोम ग्रंथियॉ तथा पराग थैली अनुपस्थित होती है। कॉलोनी मे कई सौ नर अथवा नर अनुपस्थित होते है। नर का काम केवल मैथुन उड़ान के समय रानी को निषेचित करना है।

मधुमक्खी पालन हेतु आवश्यक उपकरण

1. मधुमक्खी गृह : मधुमक्खी पालन के लिये विभिन्न प्रकार के कृत्रिम छतों को उपयोग मे लिया जाता है। हमारे देश मे विभिन्न स्थानो पर अलग–अलग प्रकार के मधुमक्खी गृहों का उपयोग हो रहा है। इनमे पोट गृह, बुक गृह, मधुसागर गृह, हाउस गृह, एकल भिति तथा दोहरी भिति देदान्त गृह, मूलकेन्द्रक गृह, लैन्गस्ट्रोथ गृह, न्यूटन गृह, ब्रिटिश स्टेन्डर्ड गृह, ज्योलीकोट गृह (Jeolikote hive) आदि सम्मिलित है। दक्षिणी भारत मे न्यूटन द्वारा निर्मित न्यूटन गृह सर्वाधिक प्रचलित है।

2. कोम्ब आधार : यह शुद्ध मोम का बना होता है, जो षटभुजाकार कोष है। इसी के ऊपर श्रमिक कोष्ठ का निर्माण करते है।

3. आभासी विभाजन बोर्ड : यह एक प्रकार की फ्रेम होती है, जो नियमित फ्रेम के सहारे लगायी जाती है, जिससे मधुमक्खी को सीमित स्थान मिल सके, जब छतें मे संख्या कम हो।

4. धूमक यंन्त्र : यह टिन का डिब्बा होता है, जो धुऑ छोड़ने का कार्य करता है। जब मधुमक्खियो को नियंन्त्रित करनी हो तब धुँआ छोड़ा जाता है।

5. स्क्रेपर : यह एक प्रकार की लोहे की चपटी पती होती है, जो बक्से की फर्श को साफ करने के लिये काम मे लिया जाता है।

6. ब्रुश : ब्रुश के बाल कोमल होने चाहिये। शहद के छते को बाहर निकालने से पहले मधुमक्खियों को हटाने के लिये इसका प्रयोग किया जाता है।

7. ड्रोन ट्रेप : यह सामान्यतया लकड़ी का टुकड़ा होता है, जो मधुमक्खी गृह के प्रवेश से बड़ी होती है, जिसमे एक उथला छोटा छेद होता है, जिससे ड्रोन बाहर निकलता है, परन्तु वापस गृह मे प्रवेश नही कर पाता है एव वहॉ ट्रेप हो जाता है।

8. प्रवास ट्रेप : यह एक आयताकार बॉक्स होता है, जो एक साईड से खुला तथा दूसरी साईड इसकी ऊॅचाई के दो–तिहाई भाग पर तार लगे होते है। रानी एवं श्रमिक मधुमक्खी पलायन नही कर सकते है। जब पलायन करने की कोशिश करते तो इस ट्रेप मे एकत्रित हो जाते है, जिन्हे बाद मे मधुमक्खी गृह मे स्थान्तरित कर दिया जाता है।

9. रानी को अलग करने वाला उपकरण : यह भी प्रवास ट्रेप की तरह ही होता है। यह शीट ब्रूड चेम्बर के ऊपर रखी जाती है। यह रानी को ऊपर जाने से रोकता है, जिसके कारण ऊपरी भाग मे रानी कोष्ठ का निर्माण होता है।

10. जाली : यह सूत अथवा रेशम के धागो से बनी होती है। यह मधुमक्खियों के प्रकोप से बचने के लिये उपयोग मे ली जाती है। इसको सिर मे पहन लेते है, जो गर्दन तक के भाग को ढकती है।

11. दस्ताने : मधुमक्खियों के डंक से बचने के लिये हाथों मे दस्ताने पहनने चाहिये ताकि डंक से बचाव हो सके। दस्ताने ढीले होने चाहिये।

12. मधु निष्कासन उपकरण : यह एक बेलनाकार टीन का ड्रम होता है, जिसके बीच मे कुछ जालीनुमा थैलियॉ घूमने वाले डंडों पर लगी होती है। इन थैलियों को कोम्ब का ढक्कन खोलने के बाद भर देते है और फिर डंडे की सहायता से इसे घुमाते है, जिसके कारण कोम्ब का शहद ड्रम की दिवारो से टकराता है तथा वहॉ उसकी तली मे एकत्रित हो जाता है, जहॉ से शहद को बाहर निकाल लेते है।

एपिअरी की स्थिति :
मधुमक्खी पालन के लिये स्थान का चयन करते समय निम्न बिन्दुओ को ध्यान मे रखना चाहिये:

- एपिअरी के लिये उस स्थान का चयन करना चाहिये जहॉ अधिक पराग एवं मधु उत्पादित करने वाले पादप 1 से 1.5 किलोमीटर क्षेत्र मे हो।
- एपिअरी के आस–पास साफ एवं ताजा पानी मधुमक्खियों के लिये उपलब्ध होना चाहिये।
- स्थान समतल होना चाहिये तथा जलनिकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिये।
- ज्यादा हवा चलने वाले स्थान का चयन नही करे, क्योंकि हवा से छते को नुकसान हो सकता है।
- एपिअरी का स्थान छायादार होना चाहिये।
- नया बगीचा एपिअरी के लिये सर्वोतम स्थान है।
- एपिअरी का स्थान दीमक एवं चीटियों से रहित होना चाहिये।
- एपिअरी का स्थान हाईवे के बिल्कुल पास नही होना चाहिये।
- एपिअरी के चारो ओर जीवित झाडियॉ अथवा तार की फेन्सिंग होनी चाहिये।

मधुमक्खी चरागाह : मधुमक्खी पराग एवं मधु को पौधे से प्राप्त करती है। मधु, फूलो द्वारा स्त्रावित मीठा पदार्थ होता है, जो शहद के लिये कच्चा पदार्थ होता है। पराग, प्रोटीन युक्त होता है, जो मधुमक्खी के भोजन के लिये आवश्यक होता है। वे पौधे जो पराग एवं मधु उत्पादित करते है, उन्हे मधुमक्खी चरागाह, पराग या मधु पौधे कहते है। वह समय जब ऐसे पौधे बहुतायत मे हो, उसे शहद उत्पादन समय कहते है। जब ऐसे पौधे बहुत कम उपलब्ध हो, तो उस समय को शहद अकाल समय कहते है। पराग एवं मधु उपलब्ध करवाने वाले पौधे निम्नानुसार है:

- **पराग उपलब्ध करवाने वाले पौधे:** मक्का, ज्वार, गुलाब, बाजरा, अनार, तम्बाकू, अरण्डी, रागी, चाय आदि।
- **मधु उपलब्ध करवाने वाले पौधे:** नीम, सफेदा, इमली, मोरिन्डा, प्रोसोपिस, ट्राइबुलस आदि।
- **पराग एवं मधु दोनो उपलब्ध करवाने वाले पौधे:** नींबू, सेव, अमरूद, आम, नारियल, केला, तिल, कुसुम, सरसो, कददूवर्गीय सब्जियॉ, प्याज, भिण्डी, रिजका, कपास आदि।

एपियरी की देखभाल एवं प्रबन्धन :
1. एपियरी में मधुमक्खी की कॉलोनियों को रखना:
इस समय निम्न बिन्दुओ का ध्यान रखना चाहिये:

- एपियरी उपयुक्त मानकों के अनुसार होने चाहिये तथा स्थानीय स्तर पर उपलब्ध हल्के वजन की लकड़ी के बने होने चाहिये। कच्ची तथा भारी लकड़ी का प्रयोग नहीं करना चाहिये।
- तलपट को ब्रूड कक्ष के साथ कीलों से ना जोड़ें।
- एक एपियरी में मधुमक्खी कॉलोनियों की संख्या 50 से 100 तक ही रखें।
- एपियरी में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 10 फीट तथा बॉक्स की दूरी 3 फीट रखे।
- ऐपियरी में कॉलोनियों का ओवर स्टेंकिग न करें।

2. एपियरी में स्वच्छ जल की व्यवस्था: एक स्वस्थ एपियरी बनाये रखने के लिये एपियरी मे स्वच्छ जल की उपलब्धता सुनिश्चित करे। जब तापमान 37^0C से अधिक हो तो एपियरी में तापमान बढ़ता है, तो जल छिड़कर मधुमक्खी कॉलोनी को ठंड़ा करे। नर्स मधुमक्खियों द्वारा मधुमक्खी रोटी खिलाने के लिये, मधु तथा पराग के मिश्रण के लिये पानी की जरूरत होती है।

3. मधुमक्खी कॉलोनियों का निरीक्षण: एपियरी में सामान्यतौर पर कॉलोनियों का निरीक्षण निरन्तर करते रहना चाहिये। निरीक्षण धूप वाले दिनों में जब सामान्य तापमान $20–30^0C$ हो तभी करना चाहिये। सर्दी, हवा तथा बादल वाले दिनों मे कॉलोनियों का निरीक्षण नहीं करना चाहिये। आवश्यकता होने पर मधुमक्खियों को वश मे करने के लिये धुऑ का प्रयोग किया जा सकता है। निरीक्षण के समय रक्षात्मक पोशाक तथा चेहरा रक्षक जाली का प्रयोग करना चाहिये। रोगग्रस्त कॉलोनियों को स्वस्थ कॉलोनियों से अलग रखना चाहिये।

4. शहद निष्कासन के दौरान सावधानियॉ:
शहद निष्कासन के सयम निम्न सावधानियॉ रखनी चाहिये:

- केवल स्टेनलेस स्टील अथवा फूड ग्रेड प्लास्टिक से बने हुये शहद निष्कासन मशीन, कंटेनर और अन्य मधुमक्खी छता यंन्त्रों/उपकरणों का प्रयोग करे।

- शहद निकालने से पहले कंटेनरों तथा अन्य सभी उपकरणों को गर्म पानी में अच्छी तरह धोकर साफ कर ले।
- केवल सुपर कक्षों से ही शहद निकाले।
- कॉलोनी के प्रवेश द्वार को लूट से बचने के लिए छोटी शाखाओं या टहनियों से ढ़क देना चाहिये।
- लूट से बचने के लिये शहद निष्कासन एक बंद कमरे में या जाल लगाकर करना चाहिये, खुले स्थान में शहद निष्कासन न करे।
- शहद को एपियरी में फेलने न दें।
- सुपर तथा शिशु फ्रेमों को एपियरी में शहद निष्कासन के बाद खुला नहीं छोड़ना चाहिये।

5. प्रजनन ऋतु के समय : शहद उत्पादन समय के दौरान श्रमिक अधिक सक्रिय रहकर पराग एवं मधु फूलो से प्राप्त करते है तथा रानी की अण्ड़े देने की क्षमता भी अधिक होती है। इस दौरान अतिरिक्त स्थान उपलब्ध करवाना चाहिये, इसलिये नया, साफ, कोम्ब आधार शीट को काम मे लेते है। कमजोर स्टोक होने पर भी संख्या को बढाया जा सकता है, अनुकूल वातावरण का लाभ लेकर, इनकी जगह मजबूत कॉलोनी को सुबह के समय लाकर जब मधुमक्खीयॉ ज्यादा व्यस्त रहती है। जब मजबूत मधुमक्खीयॉ भोजन लेकर छते मे प्रवेश करती है, तो अपने वास्तविक आवास पर जाती है तथा इस प्रकार कमजोर कॉलोनी को मजबूत बनाती है।

6. लीन ऋतु के समय : लीन ऋतु के समय पराग एवं मधु की उपलब्धता बहुत कम होती है। इस समय छते मे मधुमक्खी की संख्या बहुत कम होती है, तब दो या तीन फ्रेम ढ़कने के लिये पर्याप्त होती है। मधुमक्खीयों को सीमित स्थान मे रखने के लिये डमी बोर्ड का प्रयोग किया जा सकता है। इस ऋतु के दौरान मधुमक्खीयों को कृत्रिम रूप से शहद उपलब्ध करवाना चाहिये। कॉलोनियों को शाम के समय सूर्यास्त के बाद भोजन देना चाहिये। एपियरी में सभी कॉलोनियों को एक साथ एक बार में भोजन देना चाहिये। इस ऋतु के दौरान कृत्रिम शहद के प्रयोग के कारण वेक्स मोथ तथा चीटियों का आक्रमण अधिक होता है, तब इनका प्रबंन्धन करना आवश्यक होता है।

7. प्रवास प्रबन्धन : प्रवास के कारण किसी भी मधुमक्खी की कॉलोनी की मजबूती कम हो जाती है। मधुमक्खियों के प्रवास को रोका जा सकता है, अगर विशेष रानी ब्रुड कोष्ठो के बनते ही उन्हे बन्द कर दिया जाये, क्योंकि एक कॉलोनी जब तक प्रवास नहीं करती है जब तक नई रानी राज करने वाली रानी का स्थान लेने के लिये तैयार नहीं हो जाये। प्रवास नियंत्रण की अन्य विधियॉ निम्नानुसार है:

- प्राथमिक प्रवास को रोका नहीं जाता है, लेकिन प्रवास पाश मे उन्हे एकत्रित करते तथा नये छते मे अलग कॉलोनी बनाकर रखते है। इसके बाद प्रवास को रोकने के लिये कॉलोनी मे बची हुई रानी ब्रूड कोष्ठो को नष्ट कर देते है।
- छते मे कमजोर एवं मजबूत कॉलोनी के स्थान को परस्पर बदल दिया जाये।
- एक ब्रुड कोम्ब जिसमें राज करने वाली रानी तथा कुछ श्रमिक हो उन्हे अलग छते मे रखते है, इस प्रकार कॉलोनी का विभाजन कर दिया जाता है।
- मजबूत कॉलोनी मे, प्रवास करने वाली एक या दो ब्रुड कोम्ब को हटा देना चाहिये।

8. मधुमक्खी की कॉलोनियों को स्थान्तरित करना : एक स्थान से दूसरे स्थान पर कॉलोनी को स्थान्तरित करते समय निम्न बिन्दुओं को ध्यान मे रखना चाहिये:

- एपिअरी के अन्दर ही कॉलोनी को स्थान्तरित गोधूली वेला के समय तथा आधा से एक मीटर प्रति दिन ही स्थान्तरित करे।
- कॉलोनियों का स्थानान्तरण फूलों/पौधों की अनुपलब्धता वाले क्षेत्रों से प्रचुर मात्रा में उपलब्ध फूलों/पौधों वाले क्षेत्रों मे करे।
- लम्बी दूरी पर स्थान्तरित करने के लिये ब्रुड कोम्ब को केले के रेशो से अच्छी तरक ढक देना चाहिये।
- छते के प्रवेश द्वार को स्थान्तरण के समय बन्द कर देना चाहिये।
- स्थान्तरण के समय ब्रुड चैम्बर मे शहद का पर्याप्त स्त्रोत की व्यवस्था करनी चाहिये।
- स्थानान्तरण करने से पहले झटकों से बचने के लिये कॉलोनियों को अदंर तथा बाहर से अच्छी तरह से पैक किया जाना चाहिये।
- वाहन में कॉलोनियों को इस तरह से पैक किया जाना चाहिये कि इनके प्रवेश द्वार सामने की ओर रहे।
- स्थानान्तरण का आरंभ देर सांयकाल में करे तथा यह सुनिश्चित करें की कॉलोनियॉ 10–12 घंटे के भीतर गंतव्य स्थान तक पहुॅच जायें तथा अगले दिन सुबह नये स्थान में उतारने के बाद उनके प्रवेश द्वार खोल देना चाहिये।
- यदि गतंव्य स्थान दूर है तो दिन के समय में एक उपयुक्त स्थान पर रोकने के बाद कॉलोनियों को उतारकर उनके प्रवेश द्वार खोल दें तथा सायंकाल को दोबारा उनके प्रवेश द्वार बन्द करके स्थानान्तरण की प्रक्रिया दोहरायें।
- मधुमक्खी की कॉलोनियों के स्थानान्तरण के समय रास्ते में झटकों से बचाये।

9. रानी रहित कॉलोनियों की देखभाल : वह कॉलोनी जो प्रवास के दौरान रानी को खो देती है। इस प्रकार की कॉलोनी मे श्रमिक आलसी हो जाते है, कुछ छते के प्रवेश द्वार के पास एकत्रित हो जाते है। श्रमिकों का उदर कुछ दिनों मे गहरे धूसर रंग मे बदल जाता है। इस प्रकार की कॉलोनी के लिये दूसरी रानी की व्यवस्था करनी चाहिये अथवा श्रमिको को भगाकर एक या दो रानी कोष्ठ ब्रुड कोम्ब को छते मे रखना चाहिये। दूसरा तरीका यह है कि रानी को शहद मे डुबोकर, छते मे रख देना चाहिये, जिससे रानी तथा श्रमिक आपस मे मिल जाते है। जब उपरोक्त दोनो विधियॉ काम मे नहीं आती तब रानी युक्त कॉलोनी मे इस कॉलोनी को न्यूजपेपर विधि से मिला देना चाहिये।

10. मधुमक्खी की कॉलोनियों को मिलाना : मधुमक्खी की दो कॉलोनियों को मिलाकर एक कॉलोनी तब बनायी जाती है जब उसमे से एक कमजोर अथवा रानी रहित हो। मधुमक्खी की कॉलोनियों को मिलाने की निम्न दो विधियॉ है:

● **सीधा मिलाना :** इस विधि मे दोनो छतो को पास मे लाया जाता तथा पास ही रख देते है। अवांछनीय गुणो वाली रानी को छते से बाहर निकाल दिया जाता है। अगली सुबह के समय, जब मधुमक्खियॉ व्यस्त रहती है, तब दो छतों की फ्रेम को एक मे ही रख दिया जाता है। इस विधि की सफलता इस कार्य को करने की कुशलता पर निर्भर करता है।

● **न्यूजपेपर विधि :** यह विधि उपरोक्त विधि के मुकाबले उपयुक्त है। दोनो कॉलोनियों के छतों को बिल्कुल पास मे लाया जाता, इनमे से एक छते की रानी को हटा देते तथा गोधूलि वेला के बाद दूसरी कॉलोनी के ब्रुड चैम्बर को न्यूजपेपर से ढक देते है। इस न्यूजपेपर मे बहुत सारे छेद किये हुये होते है। इस न्यूजपेपर के ऊपर रानी रहित कॉलोनी को रख दिया जाता है। दोनो ही चैम्बर के प्रवेश द्वारों को तार द्वारा बंद कर दिया जाता है। मधुमक्खियॉ धीरे–धीरे आपस मे मिल जाती, जो बाद मे एक कॉलोनी का निर्माण करती है। अगली सुबह प्रवेश द्वार से तार हटा लिये जाते तथा फ्रेम एक ही छते मे रख दिये जाते है।

11. कीटनाशकों से कॉलोनियों की रक्षा : मधुमक्खी की कॉलोनियों की कीटनाशकों से रक्षा के संबंध मे निम्न बिन्दुओं को ध्यान मे रखना चाहिये:

- कीटनाशकों के चूर्ण संरूपण की अपेक्षा स्प्रे के रूप में प्रयोग करें क्योंकि चूर्ण का प्रयोग स्प्रे के प्रयोग से अधिक हानिकारक होता है।
- कीटनाशकों का प्रयोग फसल में न करे और यदि इनका प्रयोग करना आवश्यक हो तो ऐसे कीटनाशकों का प्रयोग करे जो मधुमक्खियों के लिये कम हानिकारक हो तथा उनकी अनुशंसित मात्रा का ही प्रयोग करना चाहिये।
- फसल में पुष्पन वाली अवस्था तथा मधुमक्खियों के फोरेजिंग के समय कीटनाशकों का छिड़काव नहीं करना चाहिये।
- कीटनाशकों का छिड़काव शाम को सूरज छिपने पर जब मधुमक्खियॉ फूलों फोरेजिंग नहीं कर रही हो, तब करना चाहिये।
- अगर कीटनाशकों का छिड़काव भारी मात्रा में करना आवश्यक हो, तो कॉलोनियों को अस्थाई रूप से स्थानान्तरित कर देना चाहिये।
- कीटनाशियों एवं कवकनाशियों की मधुमक्खी के प्रति विषाक्ता के आधार पर निम्न चार भागों मे बॉटा गया है:
- अत्यधिक विषाक्त: सीधा प्रयोग करने पर मधुमक्खी मर जाती है, उपचारित पौधा एक या दो दिन के लिये विषाक्त रहता है। उदाहरण: पैराथियॉन, डाइजिनोन।

- **अधिक विषाक्त:** सीधा प्रयोग करने पर मधुमक्खी मर जाती है, उपचारित पौधा छ: घंटो के लिये विषाक्त रहता है। उदाहरण: फोरेट, मैलाथियान।
- **मध्यम विषाक्त:** इनका प्रयोग उचित मात्रा एवं समय पर किया जा सकता है। खेत मे तथा कॉलोनियों पर इन रसायनों का प्रयोग सीधा नहीं करना चाहिये। उदाहरण: कार्बेरिल।
- **अविषाक्त:** ये सामान्तया मधुमक्खी के लिये नुकसान दायक नहीं होते है। उदाहरण: बोर्डेक्स मिश्रण, निकोटीन, पाइरेथ्रम, रोटेनोन, सल्फर।

मधुमक्खी वेक्टरिंग : आधुनिक जैविक कृषि की क्रांतिकारी तकनीक

एच.पी.मेघवाल, बी.एल.ढाका, योगेन्द्र कुमार मीणा एवं शेफाली सोनी
कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा, प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

भारतीय कृषि प्रणाली पारंपरिक तकनीकों और आधुनिक नवाचारों का मिश्रण है। बीते कुछ दशकों में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग ने जहाँ उत्पादन बढ़ाया है, वहीं मिट्टी, जल, पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को गंभीर खतरे में भी डाला है। ऐसी स्थिति में सतत, पर्यावरण–अनुकूल और सुरक्षित तकनीकों की आवश्यकता महसूस की जा रही है। 'मधुमक्खी वेक्टरिंग' ऐसी ही एक अभिनव जैविक तकनीक है जो प्राकृतिक मित्र जीवों का उपयोग कर फसलों को सुरक्षित रखती है और उत्पादन को बढ़ावा देती है। मधुमक्खी वेक्टरिंग से उत्पादकता में औसतन 20–30 प्रतिशत तक की बढ़ोतरी अपेक्षित है, कुछ आदर्श स्थितियों में यह और भी अधिक हो सकती है। यह तकनीक परागण प्रक्रिया को और अधिक प्रभावी बनाती है जिससे फल और बीज बनने की दर बढ़ जाती है। जैविक नियंत्रण एजेंट फसल की बीमारियों और कीटों को कम करते हैं, जिस कारण पौधों की वृद्धि और उत्पादन क्षमता बढ़ती है। कुल मिलाकर,मधुमक्खी वेक्टरिंग तकनीक न केवल पर्यावरण को सुरक्षित रखती है, बल्कि टिकाऊ कृषि की दिशा में एक प्रभावी कदम है। यह विशेषकर उन किसानों और क्षेत्रों के लिए फायदेमंद है,जो दीर्घकालीन कृषि सुरक्षा,भूमि स्वास्थ्य और लागत–कटौती पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

मधुमक्खी वेक्टरिंग क्या है?

मधुमक्खी वेक्टरिंग एक जैविक फसल सुरक्षा तकनीक है, जिसमें मधुमक्खियों के माध्यम से सूक्ष्म जैविक एजेंट (जैसे फंगस या बैक्टीरिया) को फसलों के फूलों तक पहुँचाया जाता है। परंपरागत रूप से,कीटनाशकों या रोगनाशकों को फसलों पर छिड़काव कर पहुँचाया जाता है, लेकिन मधुमक्खी वेक्टरिंग में यही कार्य परागण के समय मधुमक्खियाँ करती हैं। यह एक अत्यंत लक्षित और पर्यावरण–सुरक्षित प्रक्रिया है।

टिकाऊ कृषि हेतु मधुमक्खी वेक्टरिंग प्रभावी तकनीक

मधुमक्खी वेक्टरिंग तकनीक टिकाऊ कृषि के लिए प्रभावी मानी जाती है। यह तकनीक प्राकृतिक और पर्यावरण–अनुकूल रोग और कीट नियंत्रण का तरीका है, जो रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता को काफी हद तक कम करती है और फसल सुरक्षा के पारंपरिक तरीकों का स्थायी विकल्प प्रदान करती है।

- **पर्यावरण के अनुकूल:** मधुमक्खी वेक्टरिंग में जैविक एजेंट (लाभकारी फफूंद, बैक्टीरिया) का उपयोग होता है, जो न तो पर्यावरण को और न ही मनुष्य या अन्य लाभकारी जीवों को नुकसान पहुँचाता है।
- **रासायनिक कीटनाशकों की उपयोग में कमी :** इस तकनीक से खेतों में हानिकारक रासायनिक कीटनाशकों का इस्तेमाल घट जाता है, जिससे मिट्टी, पानी और जैव विविधता सुरक्षित रहती है।
- **फसल की पैदावार और गुणवत्ता में बढ़ोतरी :** जैविक एजेंट पौधों को रोगों से बचाकर उनकी सेहत और उत्पादन दोनों को बढ़ाते हैं,जिससे किसानों की आय भी बढ़ सकती है।
- **जैव विविधता का संरक्षण :** मधुमक्खी जैसे प्राकृतिक परागणकर्ता कृषि पारिस्थितिकी तंत्र में विविधता और संतुलन बनाए रखते हैं,जिससे फसलें भविष्य के खतरों के प्रति अधिक लचीली बनती हैं।

यह तकनीक कैसे काम करती है?

मधुमक्खी वेक्टरिंग तकनीक फसलों को रोगों से बचाने के लिए मुख्य रूप से मधुमक्खियों के माध्यम से जैविक नियंत्रण एजेंट (जैसे लाभकारी फफूंद या बैक्टीरिया) सीधे फूलों तक पहुँचाती है, जिससे फसलों के रोगजनक (जैसे हानिकारक फफूंद या बैक्टीरिया) नियंत्रित हो जाते हैं। मधुमक्खी वेक्टरिंग तकनीक की कार्यप्रणाली निम्न प्रकार से होती है :

- **मधुमक्खी के छत्ते में बायो–डिस्पेंसर की स्थापना :** मधुमक्खियों के छत्ते के बाहर एक विशेष डिस्पेंसर उपकरण लगाया जाता है जिसमें जैविक एजेंट (Bio Control Agent) भरे जाते हैं।
- **मधुमक्खियों पर जैविक एजेंट को लगाना :** जब मधुमक्खियाँ छत्ते से बाहर जाती हैं, तो वे इस जैविक पाउडर में से होकर निकलती हैं और उनके शरीर पर यह एजेंट चिपक जाता है।
- **फूलों पर लाभकारी जीवाणुओं का स्थानांतरण :** मधुमक्खियों के शरीर पर विशेष जैविक एजेंट पाउडर के रूप में चिपका दिए जाते हैं। जब मधुमक्खियाँ पराग इकट्ठा करने फूलों पर जाती हैं, तब ये एजेंट फूलों और फसलों की सतह पर स्थानांतरित हो जाते हैं, जहाँ वे रोगकारक सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोकते हैं या उनका प्रतिस्पर्धी बनकर उन्हें हानि पहुँचने से बचाते हैं।
- **प्रत्यक्ष रोगनिरोधी क्रिया :** उदाहरणस्वरूप, ट्राइकोडर्मा या बेसिलस जैसे सूक्ष्मजीव पौधे की सतह पर पहुंचकर वहां मौजूद हानिकारक रोगजनकों को दबा देते हैं, जिससे फसलों में बीमारियाँ पनप नहीं पातीं।

उपयोग किए जाने वाले जैविक एजेंट

मधुमक्खी वेक्टरिंग में जिन जैविक एजेंट्स का उपयोग होता है,वे पूरी तरह प्राकृतिक, गैर–विषैले और पर्यावरण–अनुकूल होते हैं। प्रमुख एजेंट हैं :

- **क्लोनोस्टैचिस रोजिया :** यह एक लाभकारी कवक है जो फलों को ग्रे मोल्ड जैसे रोगों से बचाता है।
- **ट्राइकोडर्मा :** यह मृदा जनित रोगों के लिए उपयोगी फंगस है।
- **बैसिलस सबटिलिस :** यह बैक्टीरिया फसलों की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है।

किन फसलों में उपयोगी है?

मधुमक्खी वेक्टरिंग विशेष रूप से उन फसलों में प्रभावशाली है जिनमें फूल आते हैं और कीटों द्वारा परागण आवश्यक होता है।

- स्ट्रॉबेरी
- टमाटर
- नींबू
- सेब
- ब्लूबेरी
- सूरजमुखी
- ककड़ी और खीरा जैसी बेलवर्गीय फसलें

मधुमक्खी वेक्टरिंग के लाभ

मधुमक्खी वेक्टरिंग कृषि के लिए बहुत सारे प्राकृतिक और आर्थिक लाभ देती है, मुख्य फायदे निम्नलिखित हैं :

- **पर्यावरण के अनुकूल :** इसमें उपयोग होने वाले जैविक एजेंट (जैसे लाभकारी फफूंद या बैक्टीरिया) मनुष्यों, पशुओं और पर्यावरण के लिए सुरक्षित होते हैं। ये लाभकारी कीट, वन्यजीव और मिट्टी–जल को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं।
- **रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता में कमी :** इससे खेतों में हानिकारक रसायनों का उपयोग काफी घट जाता है, जिससे जैव विविधता और भूमि स्वास्थ्य सुरक्षित रहते हैं।
- **लागत प्रभावी :** परंपरागत रासायनिक नियंत्रण की तुलना में जैविक एजेंट और उनकी आपूर्ति सस्ती हो सकती है। हालांकि, प्रारंभिक निवेश हो सकता है।
- **फसल की पैदावार और गुणवत्ता में वृद्धि :** यह तकनीक कीटों और बीमारियों से बचाव के साथ–साथ फूलों तक सीधे नियंत्रण एजेंट पहुँचाकर उत्पादन की गुणवत्ता और मात्रा बढ़ा सकती है।
- **इस्तेमाल में सरल :** मौजूदा पोलिनेशन प्रक्रियाओं में आसानी से एकीकृत की जा सकती हैय अलग से बुनियादी ढांचे की जरूरत नहीं होती।
- **फसल सुरक्षा का टिकाऊ तरीका :** लगातार इस्तेमाल से फसलें रोगों के प्रति मजबूत रहती हैं और टिकाऊ कृषि संभव होती है।
- **बीमारी से सुरक्षा और परागण एक साथ :** यह जैविक एजेंट फूलों को विभिन्न रोगों से सुरक्षित करते हैं और मधुमक्खियाँ परागण का कार्य भी करती हैं।
- **जैविक उत्पादन :** उपज में किसी प्रकार का रसायनिक अवशेष नहीं रहता, जिससे उसे जैविक मार्केट में ऊँचा दाम मिलता है।
- **लक्षित और सटीक कार्य :** केवल आवश्यक स्थानों (जैसे फूल) पर एजेंट पहुँचता है, पूरा खेत नहीं भीगता।
- **किफायती तकनीक :** किसान को स्प्रे मशीन, पंप, पानी या रसायन की आवश्यकता नहीं होती।

चुनौतियाँ

मधुमक्खी वेक्टरिंग तकनीक की प्रमुख चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं :

- **मधुमक्खियों की उपलब्धता :** सभी क्षेत्रों में प्रशिक्षित मधुमक्खियाँ आसानी से उपलब्ध नहीं हैं।
- **तकनीकी जानकारी की कमी :** किसानों को अभी इस तकनीक के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं है।
- **जलवायु पर निर्भरता :** मधुमक्खियाँ मौसम के प्रति संवेदनशील होती हैं। बारिश या अधिक सर्दी में उनकी सक्रियता घट जाती है।
- **प्रारंभिक लागत :** मधुमुखी का छत्ता और बायो–डिस्पेंसर की स्थापना में प्रारंभिक खर्च आता है।
- **मधुमक्खी की सामर्थ्य और स्वास्थ्य पर निर्भरता :** मधुमक्खियों की आबादी, उनका स्वास्थ्य, बीमारियाँ, कीटनाशकों का असर और प्राकृतिक आवास की हानि–ये सब इस तकनीक की सफलता की मुख्य अड़चनें हैं।
- **सीमित वितरण रेंज :** मधुमक्खियाँ अपने छत्ते से सीमित दूरी तक ही कार्य कर सकती हैं। बड़े या दूरदराज के खेतों में इसकी प्रभावशीलता घट सकती है।
- **प्रारंभिक लागत और प्रशिक्षण :** शुरुआत में मधुमक्खी कॉलोनी खरीदना, जैविक एजेंट जुटाना और किसानों को प्रशिक्षण देना खर्चीला हो सकता है।
- **मौसम पर निर्भरता :** बारिश, तेज हवा या प्रतिकूल मौसम एजेंट के वितरण और असर को कम कर सकते हैं।
- **एजेंट की प्रभावशीलता :** पाउडर आदि के रूप में डाले गए एजेंट का छत्ते या रास्ते मंत नुकसान हो सकता है, जिससे फसल तक पूरा लाभ पहुँचने में बाधा आ सकती है।
- **तकनीक का सीमित प्रसार :** किसानों में जागरूकता, प्रशिक्षण और भरोसे की कमी के कारण इसका बड़े पैमाने पर उपयोग सीमित हो सकता है।

भविष्य की संभावनाएँ

मधुमक्खी वेक्टरिंग तकनीक भारत में जैविक खेती और प्राकृतिक फसल सुरक्षा के लिए एक आदर्श विकल्प बन सकती है। बदलते जलवायु, घटती मिट्टी की गुणवत्ता और रसायनों के विरुद्ध उपभोक्ताओं की चिंता को देखते हुए यह तकनीक भविष्य की आवश्यकता बन जाएगी। यदि नीति निर्माताओं, वैज्ञानिकों और किसानों के बीच सामंजस्य स्थापित हो, तो यह भारत की सतत कृषि क्रांति का नया अध्याय बन सकती है।

निष्कर्ष

मधुमक्खी वेक्टरिंग एक नवीन, पर्यावरण–अनुकूल, लाभकारी और प्रभावी कृषि तकनीक है। यह तकनीक मधुमक्खियों की प्राकृतिक शक्ति को उपयोग में लाकर फसल सुरक्षा, परागण और उत्पादन तीनों में सहायता करती है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए यह तकनीक न केवल कृषि सुधार की दिशा में एक कदम है, बल्कि यह ग्रामीण युवाओं के लिए रोजगार के नए अवसर भी उत्पन्न कर सकती है। समय आ गया है जब हम प्रकृति के साथ तालमेल बैठाते हुए नवाचार को अपनाएँ और मधुमक्खी वेक्टरिंग जैसी तकनीकों को किसानों तक पहुँचाएँ।

पारंपरिक स्प्रे तकनीक बनाम मधुमक्खी वेक्टरिंग

विशेषता	पारंपरिक रसायनिक स्प्रे	मधुमक्खी वेक्टरिंग
लागत	अधिक	कम
श्रम की आवश्यकता	अधिक	बहुत कम
पर्यावरण पर प्रभाव	नकारात्मक	सकारात्मक / शून्य
परागण	नहीं करता	करता है
फसल पर अवशेष	हानिकारक रसयान शेष रहते है	जैविक, अवशेष रहित

कम लागत में अधिक लाभ: सफेद बटन मशरूम की आधुनिक और सरल उत्पादन तकनीक

दमा राम, डी एल यादव एवं सी बी मीणा

कृषि महाविद्यालय, उम्मेदगंज-कोटा, कृषि अनुसंधान केन्द्र उम्मेदगंज-कोटा

सफेद बटन मशरूम आज किसानों के लिए एक उभरता हुआ ऐसा व्यवसाय है, जिसमें कम भूमि, कम पानी, और कम लागत में भी उत्कृष्ट आय प्राप्त की जा सकती है। अनेक क्षेत्रों में सर्द मौसम स्वाभाविक रूप से इसके लिए उपयुक्त रहता है, जिससे किसान प्राकृतिक रूप से भी फसलं ले सकते हैं।सफेद बटन मशरूम की सर्वाधिक उगाई जाने वाली प्रजाति Agaricus bisporus है, जिसे पहले केवल ठंडे राज्यों या विदेशों में ही उगाया जाता था। लेकिन आधुनिक तकनीकें जैसे कि नियंत्रित तापमान, कृत्रिम कूलिंग, ह्यूमिडिटी नियंत्रण, और बेहतर कम्पोस्टिंग के कारण अब इसे भारत के लगभग सभी राज्यों में और किसी भी मौसम में आसानी से उगाया जा सकता है।

इसकी खेती में लगभग 120 दिन लगते हैं और अच्छी गुणवत्ता वाले कंपोस्ट की आवश्यकता होती है, फिर भी सही तकनीक अपनाने पर किसान भाइयों को नियमित, सुरक्षित और बाजार में स्थिर कीमतें देने वाली आय प्राप्त होती है। छोटे किसानों, महिला समूहों, युवाओं और किसान उत्पादक संगठनों (FPOs) के लिए यह एक बेहद लाभकारी उद्यम साबित हो सकता है। सफेद बटन मशरुम की खेती निम्न भागो में बांट सकते है:

1. कम्पोस्ट तैयार करना – मिश्रित अवधि
2. मशरुम स्पान उत्पादन
3. कम्पोस्ट में स्पान मिश्रण
4. केसिंग तैयार करना
5. मशरुम फसल उत्पादन एवं प्रबंधन
6. तुड़ाई के उपरांत प्रबंधन

1. कम्पोस्ट तैयार करना : मिश्रित अवधि द्वारा (18–20 दिन)

अवयव	मात्रा (कि.ग्रा)
गेहूँ का भूसा	100
गेहूँ का चोकर	2.50
यूरिया	1.80
जिप्सम	3.50

इस विधि में गेहूँ भूसें की उपरोक्त मात्रा लेकर पानी का लगातार छिड़काव किया जाता है, जिससे 2 दिन में भूसा अच्छी तरह से गीला हो जाय। इसके पश्चात यूरिया की दी हुई मात्रा को मिलाते हैं यह 0 दिन कहलाता है। इन अवयवों को मिलाकर इसका 5′ ऊँचाई5′ चौड़ा एवं आवश्यकतानुसार लंबाई का ढेर बनाते हैं। 4 वे दिन इस ढेरी को तोड़कर गेहूँ का चोकर मिलाते हैं एवं अच्छे से मिश्रित करते हैं। इस तरह 7, 9, 11, 13, 15, 17 वें दिन में ढेरी को पलटते हैं एवं 15 वें दिन में जिप्सम को मिलाकर ढेरी को पलटते हैं तथा 20 वें दिन में स्पान मिश्रण करकें बैग भरते हैं। स्पान मिश्रण के पूर्व कम्पोस्ट की निम्न जांच की जानी चाहिये :

- नत्रजन की मात्रा : 2.2 – 2.4 प्रतिशत
- नमी : 65–67 प्रतिशत
- पी.एच. : 6.8 – 7.2
- रंग : गहरा भूरा
- अमोनिया : 3 पी.पी.एम से कम
- कम्पोस्ट का धनत्व : 80–90 कि.ग्रा.प्रति घन मी.(6–7′′ गहराई)

2. मशरुम स्पान उत्पादन : बटन मशरूम स्पान तैयार करने के लिये गेहूँ या ज्वार के दानों को माध्यम के रुप में प्रयोग किया जाता है। गेहूँ दानों को गीला करने के बाद उबालकर उसमें 2 प्रतिशत कैल्शियम कार्बोनेट + कैल्शियम सल्फेट (1:1 अनुपात) मिश्रित कर निर्जीवीकरण करते हैं। तत्पश्चात सफेद बटन मशरुम का शुद्ध कल्चर जीवाणुविहीन कक्ष में मिश्रित करते है इसके बाद 12–15 दिनों में इसका कवकजाल सभी दानों के ऊपर फैल जाता है। तथा उपयोग करने के लिए बटन मशरूम स्पान तैयार हो जाता हैं।

3. कम्पोस्ट में स्पान मिश्रण : जब कम्पोस्ट निंजीवीकरण के बाद अच्छी तरह से तैयार हो जाता है तब इसे शुद्ध कल्चर से निर्मित स्पान से बिजाई करते हैं। बिजाई का अर्थ तैयार कम्पोस्ट में मशरूम बीज या स्पान का अच्छी प्रकार से मिलाना होता है। कम्पोस्ट में स्पान मिलाने हेतु मिश्रण विधि या परत विधि का प्रयोग किया जाता है। कम्पोस्ट में स्पान 0.7 प्रतिशत (7 ग्राम/कि.ग्रा. कम्पोस्ट) की दर से मिलाया जाता है। स्पान मिलाने के पूर्व फर्श को साफ कर फार्मेलिन छिड़क देना चाहिये। तत्पश्चात कम्पोस्ट में स्पान मिश्रण का कार्य संपादित किया जाना चाहिये। इसके बाद पॉलीथीन की थैलीयों में स्पान मिश्रित कम्पोस्ट को दबा–दबा कर भर दिया जाता है। ऐसा इसलिये किया जाता है कि कवकजाल का अच्छे से विकास हो सके।

4. केसिंग तैयार करना : कम्पोस्ट में मशरुम फफूंद की वानस्पतिक वृद्धि के पश्चात कोकोपिट (नारियल का रेशा), मोस, गोबर की खाद या उपयोग की गई कम्पोस्ट (2 वर्ष पुरानी) को निंजीवीकृत कर एक तह (3–4 सें.मी. मोटी) एक समान रुप से बिछाई जाती है, इसे केसिंग कहते हैं। केसिंग के प्रयोग से कम्पोस्ट में पर्याप्त नमी बनी रहती है, पी.एच. मान संतुलित रहता है एवं मशरुम के बटन बनने हेतु अनुकूल परिस्थितियाँ निर्मित होती हैं। केसिंग हेतु गली हुई गोबर की खाद + बगीचे की मिट्टी + बालू (3:2:1) भी उपयोग की जाती है। उपयोग करने के पूर्व केसिंग मिश्रण को ऑटोकलेव में या रासायनिक विधि से उपचारित किया जाता है। 200 मि.ली. फार्मेलिन को 4 लीटर पानी में मिलाकर केसिंग मिश्रण में छिड़कते हैं एवं मिश्रण को 4–6 घंटे तक पॉलीथीन से ढंक कर रखते हैं, जिससे केसिंग में उपस्थित सूक्ष्मजीव निष्क्रिय हो जाते हैं। व्यापारिक स्तर पर उपचारित करने हेतु ''केसिंग पास्च्युराइजेशन कक्ष'' बनाया जाता है, जिसमें ब्लोअर द्वारा भाप के संचालित होने से 68–700 सें. ग्रे. ताप पर केसिंग माध्यम में उपस्थित समस्त जीव निष्क्रिय हो जाते हैं। केसिंग माध्यम को उपचारित कर इसकी एक परत कम्पोस्ट के ऊपर

बिछाते हैं, जिसमें मशरुम फफूंद का फैलाव हो चुका होता है। केसिंग के पश्चात इसे अखबारी पेपर से ढंक देते हैं एवं पानी का छिड़काव सुबह–शाम करते रहते हैं ताकि केसिंग माध्यम में पर्याप्त नमी बनी रहे। मशरुम फफूंद का कवकजाल कम्पोस्ट से धीरे–धीरे केसिंग माध्यम में फैलता है जिसमें 8–10 दिन का समय लग जाता है। इसके पश्चात इसी कवकजाल से छोटे–छोटे पिन हेड बनते हैं जो 7–8 दिन में पूर्ण विकसित होकर बटन बना लेते हैं।

5. पिन हेड और बटन अवस्था : मशरुम उत्पादन गुच्छों में होता है जो केश रन के चार से पांच दिन बाद पहले छोटे–छोटे पिनहेड्स के रुप में निकलते हैं और पूर्ण रुप से विकसित होने में 7–8 दिन का समय लेते हैं। इस तरह 8–10 दिन के अंतराल से 3–4 तुड़ाई की जा सकती है एवं 6–7 सप्ताह तक उत्पादन लिया जा सकता है। संपूर्ण मौसम नियंत्रित कक्ष में श्वेत बटन मशरुम का उत्पादन 36–40 कि.ग्रा./100 कि.ग्रा. कम्पोस्ट तक प्राप्त हो पाता है। मशरुम उत्पादन पूर्ण रुपेण इस बात पर निर्भर करता है कि उत्पादन के समय वातावरण कितने समय तक अनुकूल था। उचित प्रबंधन से ही अच्छा उत्पादन संभव है।

6. तुड़ाई के उपरांत प्रबंधन :

(अ). तुडाई : सही अवस्था में तुड़ाई करना नितान्त आवश्यक है अन्यथा उसकी महक, चमक, स्वाद एवं गुणवत्ता पर विपरीत असर पड़ता है। सफेद बटन मशरुम की तुड़ाई उस समय करें जब बटन का आकार व्यास में 30–45 मि.मी. हो। सामान्यतया तुड़ाई के समय बटन का आकार तने की लंबाई से दुगुना होना चाहिये। तुड़ाई के पश्चात मशरुम को छिद्रित पोलीथीन थैलियों में एकत्र करके बाजार में मांग के अनुसार 250 या 500 ग्राम के पेकेट्स बनाते हैं।

(ब). पूर्व ठंडक (प्री कूलिंग) : वैसे तो मशरुम को कम तापक्रम पर उगाया जाता है लेकिन इसके बावजूद भी इसे तोड़ने के तुरंत बाद उपयुक्त भंडारित तापक्रम (5 डिग्री सेन्टीग्रेड) पर रखना आवश्यक है ताकि श्वसन की दर कम हो सके एवं कमरे के तापक्रम पर शीघ्र ही खराब होने की संभावना कम हो जाय।

(स). छंटाई : मशरुम तोड़ने के पश्चात इसकी छंटाई करना आवश्यक है ताकि ऐसे मशरुम जो आकार में छोटे या बहुत बड़े हो, रंग भूरा व किसी प्रकार का धब्बा हो, निकाला जा सके।

(द) उपचार : मशरुम सफेदी को बरकरार रखने के लिये रसायनों के घोल में डुबाया/उपचारित किया जाता है। इसके लिये हाइड्रोजन परआक्साइड (1:3) का कम सांद्रता वाला घोल लेते हैं जिसमें मशरुम को 1/2 घंटे तक डुबोते हैं। इसके पश्चात सिट्रिक अम्ल (0.25 प्रतिशत) का घोल जिसमें सल्फर डायआक्साइड (500 पी.पी.एम.) होता है, मशरुम को रखते हैं। वैसे सामान्य रुप से सफेदी बनाये रखने के लिये मशरुम को पोटेशियम मेटा बाइसल्फाइट (0.025 से 0.05 प्रतिशत) से साफ करते हैं।

(ई) पैकिंग : साफ व उपचारित मशरुम को विभिन्न प्रकार के डिब्बे व बक्से में रखते हैं जिसमें मशरुम अधिक समय तक सुरक्षित रहे। मशरुम को पैक करने के लिये उपयुक्त पैकिंग मटेरियल का चयन अतिआवश्यक है। पैकिंग हेतु सामान्यतया पोलीथीन की थैली प्रयुक्त करते हैं जिसमें 200–250 ग्राम मशरुम आसानी से आ सके। पोलीथीन की थैलियों (100 गेज) में 0.5 प्रतिशत जगह वायु के आने जाने के लिये छोड़ी जाती है ताकि मशरुम को रेफ्रिजिरेटरों में भंडारित किया जा सके। स्थानीय बाजार में विक्रय हेतु इसे पोलीस्ट्रीन या फाइबर बोर्ड पुनेट जो कि आंशिक रुप से पोलीविनाइल क्लोराइड से ढंके होते हैं या पोलीएसीटेट फिल्म का पैकिंग मटेरियल के रुप में इस्तेमाल किया जाता है। मशरुम को इन पैंकिंग मटेरियल में रखने से अंदर का वातावरण बदल जाता है। इसमें लगभग 10 प्रतिशत कार्बन डाइआक्साइड एवं 2 प्रतिशत आक्सीजन होती है, जो भंडारण के लिये उपयुक्त है।

(फ) परिवहन : मशरुम चूंकि शीघ्र नष्ट होने वाला आहार है इसलिये इसके परिवहन हेतु वातानुकुलित वाहन का इस्तेमाल होना चाहिये ताकि इसे आसानी से लंबी दूरियों तक ले जाया जा सके। रेफ्रिजिरेटेड वैन में मशरुम को रखने के पूर्व उसे कम तापक्रम (5 डिग्री से.ग्रे.) पर रखना अति आवश्यक है। स्थानीय बाजारों में विक्रय के लिये मशरुम को उपयुक्त पैकिंग मे बंदकर बर्फ के इन्सुलेटेड डिब्बों में रखकर ले जाना चाहिये ताकि श्वसन दर कम हो एवं मशरुम की सफेदी बनी रहे।

7. भंडारण : मशरुम को कमरे के तापक्रम पर 24 घंटे व रेफ्रिजिरेटरों में 1–2 सप्ताह तक भंडारित किया जा सकता है। भंडारण के समय कुल शर्करा, घुलनशील प्रोटीन एवं कुल फीनाल की मात्रा कम होने लगती है तथा पोलीफीनाल आक्सीडेज की क्रिया बढ़ने लगती है। जिसके कारण भंडार गृह का तापक्रम भी बढ़ने लगता है। भंडारण हेतु उपयुक्त तापक्रम 5 डिग्री से.ग्रे. व 85–90 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता होनी चाहिये। इससे विटामीन सी व अन्य तत्व बरकरार रहते हैं।

डेयरी प्रोसेसिंग में स्टार्टअप के मौके: राजस्थान के किसानों के लिए खुशहाली का नया रास्ता

माया शर्मा, रश्मि भिंडा एवं प्रशांत साहनी
डेयरी एवं खाद्य प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर

परिचय

राजस्थान हमेशा से एक मजबूत डेयरी बनाने वाला राज्य रहा है। कई गांवों में, दूध न सिर्फ रोजाना के खाने का जरिया है, बल्कि इनकम का भी एक बड़ा जरिया है। बढ़ती कंज्यूमर डिमांड, बेहतर टेक्नोलॉजी और मददगार सरकारी स्कीमों की वजह से, डेयरी प्रोसेसिंग गांव के युवाओं और किसान परिवारों के लिए सबसे अच्छे स्टार्टअप मौकों में से एक बन गया है। छोटी यूनिट भी ज़्यादा मुनाफा कमा सकती हैं, लोकल रोजगार पैदा कर सकती हैं और पूरे साल स्टेबल इनकम दे सकती हैं। यह आर्टिकल डेयरी प्रोसेसिंग में छोटे लेवल के बिजनेस के मौकों की बड़ी रेंज, इन्वेस्टमेंट की जरूरतों, मुनाफे की संभावना और किसानों के अपने वैल्यू–एडेड डेयरी बिजनेस शुरू करने के तरीकों के बारे में बताता है।

डेयरी प्रोसेसिंग एक फायदेमंद स्टार्टअप आइडिया क्यों है?

राजस्थान में किसान अक्सर कच्चा दूध कोऑपरेटिव या प्राइवेट कंपनियों को फिक्स्ड रेट पर बेचते हैं। हालांकि, दूध को वैल्यू–एडेड प्रोडक्ट में बदलने से कमाई की संभावना 2 से 5 गुना बढ़ जाती है। राजस्थान के बढ़ते शहर, मिठाई की दुकानें, हॉस्टल, स्कूल और लोकल मार्केट घी, पनीर, दही, मक्खन और आइसक्रीम जैसे प्रोडक्ट्स की बहुत ज़्यादा डिमांड पैदा करते हैं।

बढ़ते मौकों के पीछे मुख्य कारण

- गांवों में दूध की लगातार उपलब्धता।
- वैल्यू–एडेड प्रोडक्ट्स में ज़्यादा प्रॉफिट मार्जिन।
- छोटे लेवल की यूनिट्स के लिए कम इन्वेस्टमेंट ऑप्शन।
- PMFME, मुद्रा और डेयरी डेवलपमेंट प्रोग्राम के तहत सरकारी सब्सिडी और लोन स्कीम।
- ब्रांडेड और हाइजीनिक प्रोडक्ट्स के लिए कस्टमर की बढ़ती पसंद।
- राजस्थान के कस्बों और शहरों में मजबूत लोकल मार्केट।

इस तरह, डेयरी प्रोसेसिंग न सिर्फ फायदेमंद है बल्कि किसान परिवारों के लिए प्रैक्टिकल भी है।

छोटे लेवल के डेयरी प्रोसेसिंग स्टार्टअप्स के प्रकार

किसान दूध की उपलब्धता, लोकल डिमांड, इन्वेस्टमेंट कैपेसिटी और टेक्निकल जानकारी के आधार पर कई बिजनेस ऑप्शन में से चुन सकते हैं।

क.घी मैन्युफैक्चरिंग यूनिट

घी राजस्थान में सबसे ज़्यादा इस्तेमाल होने वाले डेयरी प्रोडक्ट्स में से एक है। गाय या भैंस के दूध से बने देसी घी की घरों, मिठाई की दुकानों और लोकल किराना स्टोर में बहुत ज़्यादा डिमांड है।

फायदे	जरूरी सेटअप
• घी की शेल्फ लाइफ लंबी होती है। कच्चे दूध के मुकाबले ज़्यादा प्रॉफिट मार्जिन। • पारंपरिक जानकारी से गांव वालों के लिए यह आसान हो जाता है।	• क्रीम सेपरेटर • बॉयलर या स्टीम केतली • फिल्ट्रेशन सेटअप • पैकेजिंग मटीरियल

ख. पनीर और दही प्रोडक्शन

पनीर और दही की डिमांड पूरे साल स्थिर रहती है। राजस्थान में होटल, हॉस्टल मेस, रेस्टोरेंट और मिठाई की दुकानें रोजाना बड़ी मात्रा में पनीर खरीदते हैं।

फायदे	जरूरी सेटअप
• कम इन्वेस्टमेंट और आसान प्रोसेस। • छोटे बैच प्रोडक्शन से अच्छी इनकम। • लोकल मार्केट में अच्छी डिमांड।	• स्टेनलेस स्टील के बर्तन • मिल्क हीटर • पनीर प्रेस • पैकेजिंग मटीरियल

ग. फ्लेवर्ड मिल्क और लस्सी बॉटलिंग यूनिट

शहरी कंज्यूमर फ्लेवर्ड मिल्क, मसाला मिल्क और मीठी लस्सी जैसे रेडी–टू–ड्रिंक ड्रिंक्स पसंद करते हैं। इससे युवाओं के लिए स्टार्टअप के बेहतरीन मौके बनते हैं।

फायदे	जरूरी सेटअप
• कस्टमर की ज़्यादा पसंद। • लोकल लेवल पर ब्रांड बनाना और बेचना आसान। • कम वॉल्यूम में ऑपरेशन से अच्छी इनकम।	• पाश्चराइजर • मिक्सर और होमोजेनाइजर • बॉटलिंग मशीन • रेफ्रिजेरेटेड स्टोरेज

राजस्थान मार्केट के लिए बेस्ट फ्लेवर

- केसर
- इलायची
- बादाम
- आम
- गुलाब

घ. आइसक्रीम और कुल्फी यूनिट

आइसक्रीम गांव और शहरी राजस्थान में एक बढ़ता हुआ बिजनेस है। गर्मियों के महीनों और त्योहारों के दौरान इसकी डिमांड ज़्यादा होती है।

फायदे	जरूरी सेटअप
• ज़्यादा प्रॉफिट मार्जिन • फैमिली पैक और कप की ज़्यादा डिमांड • युवा एंटरप्रेन्योर्स के लिए अच्छा मौका	• फ्रीजर • आइसक्रीम बनाने की मशीन • पैकेजिंग मटीरियल • स्टेबलाइजर और फ्लेवर

ड. ताजा दूध पैकेजिंग यूनिट (छोटा स्केल)

यह उन इलाकों में सही है जहाँ दूध ज़्यादा मिलता है लेकिन चिलिंग सेंटर कम हैं।

फायदे	जरूरी सेटअप
• किसान अपना दूध बेहतर रेट पर बेचते हैं। • लोकल कस्टमर ताजा और साफ–सुथरे तरीके से पैक किया हुआ दूध पसंद करते हैं।	• दूध पाउच पैकिंग मशीन • पाश्चराइजर • टेस्टिंग किट

च. खोआ (मावा) बनाने की यूनिट

मावा का इस्तेमाल पेड़ा, बर्फी और रसगुल्ला जैसी मिठाइयों में बहुत ज्यादा होता है। मिठाई की दुकानें भरोसेमंद लोकल सप्लायर से अच्छी क्वालिटी का खोआ पसंद करती हैं।

फायदे

- त्योहारों और शादियों के मौसम में अच्छी डिमांड।
- रोजाना दूध सरप्लस वाले किसानों के लिए सही।

मुनाफे की संभावना

लोकल मिठाई बाजारों में ज्यादा वैल्यू एडिशन।

Pasteurization Plant
(Image source – Mahi Machinery, Ahemdabad)

Khoya Making Machine (Image source
The Royal Machinery, Ahemdabad)

छ. व्हे–बेस्ड बेवरेज और प्रोडक्ट्स

व्हे, पनीर बनाने का एक बाय–प्रोडक्ट है, जिसका इस्तेमाल अब ड्रिंक्स, बेकरी आइटम्स और हेल्थ बेवरेज में किया जाता है।

यह एक मश्वडर्न मौका क्यों है

- बहुत कम इन्वेस्टमेंट।
- मार्केट तेजी से बढ़ रहा है।
- प्रोबायोटिक ड्रिंक्स और स्मूदी बना सकते हैं।

डेयरी स्टार्टअप्स के लिए इन्वेस्टमेंट :

स्टार्टअप कॉस्ट प्रोडक्ट के टाइप और प्रोडक्शन कैपेसिटी पर निर्भर करती है। आम तौर पर:

इन्वेस्टमेंट रेंज (लगभग)

- पनीर, दही, खोवा जैसी माइक्रो यूनिट्स के लिए रू. 50,000 से रू. 2 लाख।
- घी और फ्लेवर्ड मिल्क यूनिट्स के लिए रू. 2 से रू. 5 लाख।
- आइसक्रीम और छोटी मिल्क प्रोसेसिंग लाइन्स के लिए रू. 5 से रू. 15 लाख।

किसान घर से शुरू कर सकते हैं।

डेयरी स्टार्टअप्स को सपोर्ट करने वाली सरकारी स्कीमें

सरकार सब्सिडी और लोन के जरिए ग्रामीण एंटरप्रेन्योर्स को सपोर्ट करती है। जरूरी स्कीमें:

- **PMFME स्कीम:** फूड प्रोसेसिंग यूनिट्स के इक्विपमेंट पर 35% सब्सिडी।
- **मुद्रा लोन:** बिना किसी कोलैटरल के रू. 10 लाख तक का आसान लोन।
- डेयरी एंटरप्रेन्योरशिप डेवलपमेंट स्कीम (DEDS): डेयरी यूनिट्स, चिलिंग यूनिट्स और मिनी प्लांट्स के लिए मदद।
- **NABARD सपोर्ट:** गांव लेवल की यूनिट्स के लिए ट्रेनिंग और फाइनेंशियल गाइडेंस।

  लोकल कोऑपरेटिव डेयरियां और कृषि विज्ञान केंद्र भी ट्रेनिंग और टेक्निकल मदद देते हैं।

ग्रामीण डेयरी एंटरप्राइजेज के लिए मार्केटिंग के मौके

शहरों में बढ़ती डिमांड और बेहतर ट्रांसपोर्ट सुविधाओं की वजह से डेयरी प्रोडक्ट्स बेचना पहले से कहीं ज्यादा आसान हो गया है।

प्रोडक्ट्स बेचने के लिए सबसे अच्छी जगहें

- आस–पास के शहर और बाजार
- स्कूल और हॉस्टल
- लोकल किराने की दुकानें
- मिठाई की दुकानें
- छोटे रेस्टोरेंट और होटल
- ऑनलाइन डिलीवरी प्लेटफॉर्म (बड़ी यूनिट्स के लिए)

ब्रांडिंग टिप्स

- साफ, आकर्षक पैकेजिंग का इस्तेमाल करें।
- लेबल पर "गांव में बना", "शुद्ध दूध" या "देसी घी" लिखें।
- भरोसा बनाने के लिए साफ–सफाई और शुद्धता बनाए रखें।
- राजस्थान के कस्टमर ताजे और लोकल बने डेयरी प्रोडक्ट पसंद करते हैं, जिससे गांव के एंटरप्रेन्योर के लिए मार्केटिंग आसान हो जाती है।
- किसानों के लिए ट्रेनिंग और स्किल डेवलपमेंट
- किसानों को डेयरी प्रोसेसिंग शुरू करने के लिए हाई–लेवल एजुकेशन की जरूरत नहीं है। कुछ दिनों या हफ्तों की छोटी ट्रेनिंग ही काफी है।

कुछ ट्रेनिंग सेंटर

- कृषि विज्ञान केंद्र
- स्टेट यूनिवर्सिटी का ट्रेनिंग प्रोग्राम
- ICAR के संस्थान
- सरस कोऑपरेटिव ट्रेनिंग प्रोग्राम ये सेंटर प्रोसेसिंग, पैकेजिंग, साफ–सफाई और बिजनेस मैनेजमेंट सिखाते हैं।

निष्कर्ष:

डेयरी प्रोसेसिंग स्टार्टअप राजस्थान के किसानों के लिए इनकम बढ़ाने, कच्चे दूध की कीमतों पर डिपेंडेंसी कम करने और एक सस्टेनेबल गांव का बिजनेस बनाने का एक पावरफुल तरीका है। घी, पनीर, आइसक्रीम, लस्सी, फ्लेवर्ड मिल्क या खोवा जैसी छोटी प्रोसेसिंग यूनिट्स अपनाकर किसान रोजाना मुनाफा कमा सकते हैं, आस–पास रोजगार पैदा कर सकते हैं और अपनी कम्युनिटी को अच्छी क्वालिटी के प्रोडक्ट दे सकते हैं। सरकारी स्कीमों, ट्रेनिंग इंस्टीट्यूशन और मार्केट की मजबूत डिमांड के सपोर्ट से, डेयरी प्रोसेसिंग गांव के युवाओं के लिए सबसे अच्छे बिजनेस के रास्तों में से एक है।

पशु सुधार में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का योगदान

अनिता कुमारी मीणा
राजस्थान कृषि महाविद्यालय, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर

कृत्रिम बुद्धिमत्ता आजकल हर क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव ला रही है और पशुपालन में भी इसका महत्वपूर्ण योगदान है। पशु सुधार के क्षेत्र में त्रिम बुद्धिमत्ता तकनीक का उपयोग पशुओं की गुणवत्ता, उत्पादन क्षमता और स्वास्थ्य सुधारने में किया जा रहा है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीक पशुजन्य समस्याओं का समाधान करने प्रजनन प्रक्रियाओं को बेहतर बनाने और पशु प्रबंधन में नवीनीकरण लाने में मदद कर रही है। यह लेख इस बात पर केंद्रित है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता कैसे पशु सुधार में मदद करती है और इसके भविष्य में किस तरह से उपयोग हो सकता है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का परिभाषा

कृत्रिम बुद्धिमत्ता वह तकनीक है, जिसमें मशीनें और कंप्यूटर सिस्टम मानव मस्तिष्क के समान कार्य करते हैं, सिखने सोचने समझने और निर्णय लेने में सक्षम होते हैं। पशु सुधार में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उद्देश्य पशुओं की नस्ल सुधार, स्वास्थ्य प्रबंधन और उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए इन तकनीकों का उपयोग करना है।

पशु सुधार में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के क्षेत्र

- **प्रजनन प्रबंधन :** कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीक का सबसे बड़ा योगदान पशु प्रजनन में है। पारंपरिक रूप से प्रजनन कार्यों के लिए मनुष्य पर निर्भरता होती थी, लेकिन कृत्रिम बुद्धिमत्ता की मदद से प्रजनन प्रक्रिया को स्वचालित और अधिक सटीक बनाया जा सकता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग संतानोत्पत्ति की गुणवत्ता को सुधारने उच्च गुणवत्ता वाले ब्रीडिंग चयन और सबसे उपयुक्त ब्रीडर्स की पहचान में किया जा सकता है।

उदाहरण के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित सॉफ्टवेयर और एप्लिकेशन पशु प्रजनन के बारे में डेटा इकट्ठा कर सकते हैं जैसे कि जननांगी चक्र गर्भधारण दर और गर्भावस्था की निगरानी जिससे सही समय पर प्रजनन प्रक्रिया को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

- **स्वास्थ्य निगरानी :** कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग पशुओं की स्वास्थ्य स्थिति की निगरानी में भी किया जा रहा है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित सिस्टम जैसे कि वियरबल डिवाइस पशुओं की शारीरिक स्थितियों को ट्रैक कर सकते हैं, जैसे तापमान, हृदय गति, गतिविधि स्तर और वजन में बदलाव। इससे पशु की बीमारियों का जल्दी पता चल सकता है और सही उपचार समय पर दिया जा सकता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग पशु चिकित्सकों द्वारा पशुओं के स्वास्थ्य का आंकलन करने के लिए भी किया जा सकता है। डेटा के माध्यम से पशु के स्वास्थ्य में संभावित गिरावट का अनुमान पहले से लगाया जा सकता है, और तुरंत उपचार शुरू किया जा सकता है।
- **पोषण प्रबंधन :** कृत्रिम बुद्धिमत्ता के माध्यम से पशु के आहार की सटीकता और गुणवत्ता को मश्वनिटर करना आसान हो गया है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित सिस्टम पशुओं की पोषण आवश्यकता के आधार पर उनके आहार का निर्धारण कर सकते हैं। यह पोषण के स्तर को बेहतर बनाता है, जिससे उत्पादकता बढ़ती है और पशु का स्वास्थ्य बेहतर रहता है।
- **व्यवसायिक निर्णय :** कृत्रिम बुद्धिमत्ता पशुपालकों को व्यवसायिक निर्णय लेने में भी मदद कर सकता है। पशुओं के उत्पादन बिक्री प्रजनन और स्वास्थ्य के बारे में डेटा एकत्र करने के बाद कृत्रिम बुद्धिमत्ता सॉफ्टवेयर भविष्यवाणियाँ कर सकते हैं और पशुपालकों को सूचित कर सकते हैं कि कौन से निर्णय उनके लिए सबसे लाभकारी होंगे। इससे व्यवसायों को अपनी लागत को कम करने और लाभ को अधिकतम करने में मदद मिल सकती है।
- **नस्ल सुधार :** कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग नस्ल सुधार में भी किया जा सकता है। इसे पशु की गुणसूत्र संरचना और जीन की पहचान करने के लिए उपयोग किया जा सकता है जिससे उच्च गुणवत्ता वाले पशु उत्पन्न किए जा सकते हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता सॉफ्टवेयर पशु के विकास की संभावनाओं की भविष्यवाणी करने में सक्षम होते हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि उच्च गुणसूत्र वाले पशु चयनित हों।

- **दूध उत्पादन और पैटर्न पहचान :** कृत्रिम बुद्धिमत्ता दूध उत्पादन की दर और गुणवत्ता में सुधार लाने में मदद कर सकता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित सिस्टम दूध उत्पादन के पैटर्न को ट्रैक करते हैं जिससे दूध उत्पादन में बदलाव और वृद्धि की संभावना का पता लगाया जा सकता है। इसके साथ ही, कृत्रिम बुद्धिमत्ता दूध में प्रोटीन और वसा के स्तर को भी माप सकता है, जो इसके गुणवत्ता को बेहतर बनाता है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के द्वारा पशु सुधार में आने वाली चुनौतियाँ

- डेटा सुरक्षा और गोपनीयता कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित सिस्टम में बड़े पैमाने पर डेटा संग्रहण की आवश्यकता होती है जिसमें पशु का स्वास्थ्य प्रजनन पोषण और उत्पादन के आंकड़े होते हैं। यह डेटा गोपनीयता और सुरक्षा की समस्याओं को उत्पन्न कर सकता है जिसे संभालना जरूरी है।

- तकनीकी जानकारी की कमी कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीक का सही उपयोग करने के लिए पशुपालकों को तकनीकी जानकारी और कौशल की आवश्यकता होती है। कई क्षेत्रों में किसानों को कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित उपकरणों और सॉफ्टवेयर का उपयोग करने के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

- उच्च लागत कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित उपकरण और सॉफ्टवेयर विकसित करने और उन्हें स्थापित करने की लागत काफी अधिक हो सकती है। यह छोटे और मंझले स्तर के पशुपालकों के लिए एक चुनौती हो सकता है।

निष्कर्ष : कृत्रिम बुद्धिमत्ता पशु सुधार के क्षेत्र में एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में उभरी है जो प्रजनन, स्वास्थ्य प्रबंधन, पोषण, नस्ल सुधार और व्यवसायिक निर्णयों को बेहतर बनाने में मदद कर रही है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीकों का सही उपयोग पशुपालकों के लिए लाभकारी साबित हो सकता है, जिससे न केवल उनकी उत्पादकता में वृद्धि होगी, बल्कि उनके व्यवसाय को भी एक नया दिशा मिल सकेगा। हालांकि, इसके सही उपयोग के लिए प्रशिक्षण और उच्च लागत जैसी कुछ चुनौतियाँ सामने आती हैं, जिन्हें समय के साथ हल किया जा सकता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता का भविष्य पशु सुधार में अत्यधिक उज्जवल प्रतीत होता है और इसका उपयोग पशु पालन को अधिक कुशल और प्रभावी बनाने में मदद करेगा।

औषधिय पौधों से सजाऐं घर की बगीया

शशि कुमार बैरवा, हरीश वर्मा एवं इन्दिरा यादव
राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा, जयपुर एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, बूंदी

प्राचीन काल से ही भारत में बहुत सी बीमारियों से बचाव के लिए प्राकृतिक स्थान जैसे– जगलों, पहाडों तथा अपने आस–पास क्षैत्र में पाई जाने वाले जड़ी बूटियों का काढ़ा या उनकी छाल, पत्तों, फूलो, फलों आदि का सेवन करने से बीमारियों के बचाव के साथ–साथ प्रतिरक्षा तंत्र भी मजबूत बनता हैं। भारत में हिमालय पर्वत पर भी बहुत सी औषधिय पादप प्राकृतिक रूप से उगते हैं। जो बहुत सी हानिकारक रोगों के लिए अचूक बाण साबित हुई है। वनों में रहने लोग अधिकतर इनका उपयोग कर गम्भीर बीमीरीयों से वर्षो से बचाव करते रहे है। वर्ष 2019–20 में एक वैश्विक बीमारी "कोरोना" जिसने पूरे विश्व को जकड कर मनुष्यों के लिए भयानक स्थिति उत्पन्न कर दी। ऐसी पस्थितियों में भी आयुर्वेद में वर्णित औषधिय पादप जैसे तुलसी, नीम गिलोय एवं अश्वगंधा आदि से बने काढ़े या उनके पौधे के भागों का सेवन कर मनुष्य ने अपनी प्रतिरक्षा तंत्र मजबुत कर कोरोना जैसी महामारी को भी मात देने में सफलता हासिल की हैं। राजस्थान सरकार ने भी जड़ी बूटियों के प्रोहत्साहत हेतु घर–घर औषधि योजना की शुरूआत की है जिसके अर्न्तगत तुलसी, नीम गिलोय, अश्वगंधा, कालमेघ आदि के पौधो का निःशुल्क रूप से वितरण किया गया। अतः घरों में गमलों में पौधे लगाने के लिए गमला अच्छी तरह से सड़ी गोबर की खाद व बलुई दोमट मृदा बराबर अनुपात में भरकर उसमें पौधे लगाने चाहिए। पौधा लगाने से पूर्व सुनिश्चित कर ले कि गमले के पेंदे (नीचले भाग) से अतिरिक्त पानी का निकास हो रहा हुआ हो।

तुलसी : यह शाखिय एवं कोमल पौधों होता है जिसके सभी भाग उपयोगी है जो खांसी, कफ, दमा वात विकारों के निदान के लिए लाभकारी होता है। तुलसी के पौधे लगातार प्राण वायु देने में सक्षम होने के कारण मानसिक तनाव में भी कमी लाता है।

गिलोय : एक बहुवर्गीय बेल, जो आसानी से पेडों के सहारे बढ़कर फैल जाता है। गिलोय एंटीऑक्सीडेंट, फ्लेवानोइड्स, टैनिन और पादप स्टेरॉयड से भरपुर होने के कारण तेज बुखार, खांसी डेंगू, चिकनगुनिया जैसी बीमारियों से भी बचाव कर शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न करता है। इसका जूस, पाउडर, कैप्सुल, काढ़ा आदि बनाकर उपयोग किया जाता है। स्वाद में यह कढवा होने के कारण शहद या ऑवले के रस में मिलाकर सेवन करना लाभप्रद होता है।

अश्वगंध : अश्वगंधा या असगंध सीधा उगने वाला, सदाहरा, तने पर हल्के रोये वाला गोल भूरे रंग की मूसला जड़ (मोटाई 2.5 से 3.75 सेमी.) वाला पौधा है। अश्वगंध की जड़ों का चूर्ण वियेनिन, विकोटीन, सोमनीन, विदानिन, विदानिनाइन एल्केलायड से भरपुर होता है। जिनका उपयोग स्त्री रोगों में, पूरानी खांसी, गठिया, जोड़ों के सूजन, कैंसर, जलोदर पेट के रोग, सीने में सूजन, चर्म रोग, रक्तचाप और सेक्स टानिक के रूप में भी किया जाता है। राजस्थान में इसकी खेती झालावाड़ क्षेत्र में भी हो रही है।

कालमेघ : कालमेघ शाकिय पौधा है पौधे का सम्पूर्ण भाग औषधिय उपयोग में लिया जाता है। जिसमें एंटी–इंफ्लामैट्री, एंटीऑक्सीडेंट, एंटीबैक्टीरियल और एंटीडाइबेटीक गुण होने के कारण अनिद्रा, अपचय, कैंसर रोग, घाव भरना एवं हदय रोगों में फायदेमद होता है। कालमेघ पौधे का रस वायरल संक्रमण वाली बीमारियों के लिए रामबाण साबित हुआ है। औषधिय पौधो को प्राकृतिक रूप से उगाया जाता है। अतः इनमें किसी भी प्रकार के रासायनिक उर्वरक, कीटनाशी एवं फंफुँदनाशी दवाओं को छिड़काव वर्जित होता है। ऐसा करने से औषधिय गुणों में कोई परिवर्तन नहीं होता है। हमारे घरेलु नुसकों में घर–घर में उपयोग होता है। अतः इनके बार–बार सेवन से परिवार के सभी सदस्यों का मौसमी बीमारियों तथा कारोना जैसी घातक बीमारियों में शरीर की प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत कर बचाव किया जा सकता है। ये सभी पौधे आसानी से कम जगह व सामान्य प्रबन्ध में हमारे स्वास्थ्य में सुधार कर हमारे घर के साथ प्रदेश को खुशहाल बनाते हैं।

साधारण नाम	तुलसी	अवश्वगंधा	कालमेघ
वास्तविक नाम	ऑसिमम बेसिलिकम	विथानिया सोम्नीफेरा	एन्ड्रोग्रेफिस पैनीकुलेटा
उन्नत किस्म	सिमैप–सौम्या, विकार सुधा	पोषिता, निमिटली–118, ज्वाहर अश्वगंधा–20, नागोरी अश्वगंधा एवं सिमैप–प्रताप आदि	सिम–मेद्या
उपयोग	तेल का उपयोग फार्मास्युटिकल्स, साबुन, प्रसाधन सुगंध उद्योग एवं एरोमाथिरैपी में होता है।	सूखी जड़ों का प्रयोग बलवर्धक के रूप, गठिया, त्वचा की बीमारियों, सूजन, पेट के अल्सर तथा मंदाग्नि के उपचार में किया जाता हैं।	सम्पूर्ण शाक, सम्पूर्ण शाक का प्रयोग यकृत विकार, तीव्र ज्वर, पेचिस इत्यादि के उपचार में होता है। यह जीवाणुरोधी, प्रति विषाणु कारक, पित्तवर्धी, कफोत्तसाकरक एवं रक्तशोधन है। एन्ड्रोग्रेफेलाइड व नियाएन्ड्रोग्रेफेलाइड प्रमुख रासायनिक घटक हैं।
प्रमुख रासायनिक घटक	मिथाइल चेवीकाल, लिनालूल		

साधारण नाम	तुलसी	अवश्वगंधा	कालमेघ
वातावरणिय स्थिति उन्नत किस्म	गर्म जलवायु उपयुक्त सिमैप–सौम्या, विकार सुधा	इसके लिए शुष्क जलवायु होनी चाहिए। शुष्क भागों, समशीतोष्ण एवं मध्य शीत वाले क्षेत्रों में जहाँ 600–700 मि.मी. वर्षा होती है, खेती हेतु उपयुक्त है। जाड़े के दिनों में वर्षा होने से उपज में गुणात्मक सुधार होता है।	इसकी फसल को आर्द्र एवं गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। यह शीतोष्ण तथा समशीतोष्ण जलवायु तथा उचित वर्षा वाले स्थानों में उत्तम वृद्धि करता है।
भूमि	समुचित जल निकास वाली, भुरभुरी एवं समतल भूमि उचित होती है।	इसकी खेती विभिन्न प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है, परन्तु भुरभुरी, हल्की, बलुई दोमट या लाल मिट्टी जिसका पी. एच. 7–8 और जल निकास का उचित प्रबन्ध होता है।	मध्यम उर्वरता वाली, उचित जल निकास युक्त बलुई दोमट या दोमट भूमि में इसकी खेती की जा सकती है। इसको छायादार अनुपयोगी भूमियों में भी लगाया जा सकता है।
प्रचर्धन विधि	नर्सरी में बीज उगाकर। प्रति हे. 1 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। नर्सरी रोपाई से 20–25 दिन पूर्व तैयारी करना चाहिए।	बीज द्वारा छिड़कवाँ विधि से करते हैं। एक हे. क्षेत्र के लिये 12–15 किग्रा. बीज पर्याप्त होता है। बीज को बोने से पहले 3 ग्रा. थिरम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिये।	बीज द्वारा (नर्सरी में उगाकर) मई में प्रति हेक्टेएर लगभग 450 ग्राम बीज 10x12 मी. की उभरी हुई क्यारियों में बोते हैं। नर्सरी में आवश्यकतानुसार नमी बनाये रखे।
पौध रोपण एवं भूमि की तैयारी	पौध की रोपाई जुलाई महीने में 45x30 सेमी. की दूरी पर करना चाहिए।		एक–दो जुताई के पश्चात् पाटा लगाकर खेत को समतल कर समुचित जल प्रबन्ध एवं निकास के साथ उचित आकार की क्यारियाँ बना लेनी चाहिये। 15 जून से 20 जुलाइ तक 30–40 दिन की पौध का दोपहर के बाद रोपण करते हैं। पक्ति से पक्ति की दूरी 40 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी. रखते है।
खाद एवं उर्वरक प्रबंधन	10–15 टन सड़ी हुई गोबर की खाद या 5 टन वर्मी कम्पोस्ट पर्याप्त होती है। 40:40 कि.ग्रा. नत्रजन को 3 भाग में बाँट बराबर मात्रा में तीन बार में देनी चाहिये।	सामान्य किसी प्रकार की खाद की आवश्यकता नहीं पड़ती है, लेकिन कम उर्वरा शक्ति वाली मृदाओं में यदि 25 कि.ग्रा. नत्रजन, 25 किग्रा., फास्फोरस तथा 20 किग्रा., पोटाश प्रति हे. का प्रयोग किया जाय तो लाभकारी रहता है।	15–20 टन अच्छी तरह सड़ी गोबर की खाद अथवा 5 टन वर्मी कम्पोस्ट प्रति है. का प्रयोग करें। 80:40:40 किलो नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश का प्रयोग करना चाहिये। नत्रजन की सम्पूर्ण मात्रा तीन भागों में विभाजित करके 20:25 दिन के अन्तराल पर डालें। फास्फोरस एवं पोटाश अंतिम जुताई के समय मिट्टी में मिला दें।
सिंचाई प्रबंधन	यदि वर्षा न हो तो पहली सिंचाई पौधों के रोपण के तुरन्त बाद और फिर आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।	अधिक वर्षा अश्वगंधा के लिये हानिकारक है। बारिश न होने पर 30–40 दिन बाद सिंचाई करना चाहिए।	रोपाई के तुरन्त बाद वर्षा न होने की स्थिति में सिंचाई करनी चाहिये। यदि वर्षा उचित अन्तराल पर हो रही हो तो वह पर्याप्त रहती है। यदि मानसून में देरी हो तो 2–3 सिंचाई की आवश्यकता पड़ सकती है।
कटाई	फसल की पहली कटाई रोपाई के 3 माह बाद या फूल आने की अवस्था पर करनी चाहिये। पौधे के 25–30 से.मी. ऊपरी शाकीय भाग की कटाई करनी चाहिये।	जब पौधों में पत्तियाँ पीली पड़ने लगे तथा फल बनने की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाये तब फसल खुदाई के लिये तैयार हो जाती है। खुदाई (6–8 महीने पश्चात्) जनवरी से मार्च के मध्य करते हैं।	रोपाई के लगभग 100 दिन बाद करना चाहिये। कृषि क्रियाओं का प्रबन्धन करके दूसरी कटाई भी ली जा सकती है।
उपज	हरा शाकीय भाग 200 क्यूटल/है., तेल की उपज 100 किग्रा./है.	सूखी जड़ों की औसत उपज 8 कु. प्रति है. , व्यापारिक रूप से 6–15 मिमी. व्यास के 7–10 से.मी. लम्बाई की जड़ों के टुकड़े अच्छे रहते हैं।	सहखेती (इंटरक्रापिंग) की अवस्था में करीब 1.5–2.0 टन हे. तथा दो कटाई से 3–4 टन/हे. सूखी शाक की उपज प्राप्त की जा सकती है। एक कटाई में लगभग 3 टन सूखा शाक प्राप्त होता है।

कृषि में फ्लाई ऐश का उपयोग : मिट्टी सुधार की एक सस्ती और असरदार तकनीक

सोनल शर्मा, मनोज कुमार शर्मा एवं श्रवण कुमार यादव
कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में मिट्टी की गुणवत्ता और उर्वरता बनाए रखना अत्यत आवश्यक है। बढ़ती जनसंख्या के कारण उच्च उत्पादन की आवश्यकता और मिट्टी की निरंतर होती क्षति के कारण अब वैकल्पिक और टिकाऊ उपायों की तलाश की जा रही है। इन्हीं उपायों में से एक है – फ्लाई ऐश का कृषि में उपयोग। फ्लाई ऐश थर्मल पावर प्लांट (ताप विद्युत सयत्र) से निकलने वाला एक उप–उत्पाद है जिसे अक्सर अनुपयोगी मानकर फेंक दिया जाता है। लेकिन यदि इसका सही मात्रा और तकनीक से उपयोग किया जाए, तो यह मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को बेहतर बनाकर, फसल की उत्पादकता में वृद्धि कर सकता है। यह लेख फ्लाई ऐश के कृषि उपयोग, मिट्टी पर इसके प्रभाव और सभावनाओं की विस्तृत जानकारी प्रस्तुत करता है।

फ्लाई ऐश क्या है और यह कैसे बनती है?

फ्लाई ऐश एक महीन राख जैसा पदार्थ है जो थर्मल पावर प्लांट में कोयले के जलने से बनता है। जब कोयला (बिटुमिनस, सब–बिटुमिनस या लिग्नाइट) जलता है, तो चिमनी से जो महीन राख उड़कर बाहर आती है, वही फ्लाई ऐश कहलाती है। भारत जैसे देश, जहाँ कोयला एक प्रमुख ऊर्जा स्रोत है, वहां हर साल लाखों टन फ्लाई ऐश निकलती है। यदि इसे अनुपयोगी समझकर फेंका जाए तो यह पर्यावरण को हानि पहुचा सकती है, परंतु यदि इसे वैज्ञानिक विधियों से प्रयोग में लिया जाए, तो यह कृषि के लिए अत्यत लाभकारी हो सकती है।

कोयले के प्रकार के अनुसार फ्लाई ऐश की रासायनिक संरचना

फ्लाई ऐश की रासायनिक सरचना मुख्य रूप से जिस प्रकार के कोयले को जलाया गया है, उस पर निर्भर करती है निम्नलिखित तालिका में बिटुमिनस, सब–बिटुमिनस और लिग्नाइट कोयलों से उत्पन्न फ्लाई ऐश के रासायनिक घटकों का प्रतिशत दिया गया है:

रासायनिक घटक (%)	बिटुमिनस कोयला	सब–बिटुमिनस कोयला (%)	लिग्नाइट कोयला (%)
सिलिका (SiO_2)	20 - 60	40 – 60	15 - 45
एल्यूमिना ($Al_2 O_3$)	5 - 35	20 – 30	10 - 25
फेरिक ऑक्साइड ($Fe_2 O_3$)	10 - 40	4 – 10	4 - 15
कैल्शियम ऑक्साइड (CaO)	1 - 12	5 – 30	15 - 40
मैग्नीशियम ऑक्साइड (MgO)	0 - 5	1 – 6	3 - 10
सल्फर ट्राईऑक्साइड (SO_3)	0 - 4	0 – 2	0 - 10
सोडियम ऑक्साइड ($Na_2 O$)	0 - 4	0 – 2	0 - 6
पोटेशियम ऑक्साइड ($K_2 O$)	0 - 3	0 – 4	0 - 4
हानि पर ह्रास (LOI)*	0 - 15	0 – 3	0 - 5

स्रोत : उपाध्याय और कमल (2007½; * LOI¼Loss on Ignition) का अर्थ है कि फ्लाई ऐश में ज्वलनशील या अपूर्ण रूप से जली हुई सामग्री कितनी है।

फ्लाई ऐश कैसे प्राप्त करें?

- फ्लाई ऐश मुख्यत: थर्मल पावर प्लांट्स से प्राप्त होती है।
- किसान स्थानीय बिजली सयत्र, औद्योगिक इकाइयों या कृषि विज्ञान केंद्रों से संपर्क करके इसे मगवा सकते हैं।
- उपयोग से पहले यह सुनिश्चित कर लें कि फ्लाई ऐश में भारी धातुओं (Heavy metals) की मात्रा सीमित हो और यह खेती के लिए सुरक्षित हो।
- कुछ समय खुले में रखने से यह और सुरक्षित हो जाती है। इस प्रक्रिया को वेदरिंग कहते हैं।

फ्लाई ऐश हमें मुख्यत: थर्मल पावर प्लांट्स से प्राप्त होती है और निम्न राजस्थान स्थित सयत्र प्रमुख स्रोत हैं :

- कोटा सुपर थर्मल पावर प्लाट, कोटा (1240 MW)
- थर्मल पावर प्लाट, बारा (2320 MW)
- कवाई थर्मल पावर प्लाट (अदानी), बारां (1320 MW)
- गिराल लिग्नाइट पावर प्लाट, बाड़मेर (250 MW)

फ्लाई ऐश का मिट्टी पर प्रभाव

1. भौतिक गुण (Physical Properties)

- सिल्ट जैसे महीन कण मिट्टी की बनावट को सुधारते हैं।
- जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है। वर्षा आधारित खेती के लिए विशेष उपयोगी।
- मिट्टी की सघनता घटती है, जिससे जड़ें आसानी से गहराई तक जा सकती हैं।

2. रासायनिक गुण (Chemical Properties) :

- अम्लीय मिट्टी का pH सतुलित करता है।
- Zn, S, B, Mo, Fe, Ca, Mg जैसे पोषक तत्व प्रदान करता है।
- सिलिकॉन की मात्रा बढ़ाकर धान जैसे फसलों को मजबूती देता है।

3. जैविक गुण (Biological Properties) :

- बिना वेदरिंग वाली फ्लाई ऐश सूक्ष्मजीवों की सक्रियता को कम कर सकती है।
- वेदरिंग के बाद यह लाभकारी जीवाणुओं जैसे राइजोबियम व फास्फोरस घुलनशील जीवाणु (P-solubilizing bacteria) को बढ़ावा देती है।
- जैविक खाद के साथ प्रयोग करने पर जैविक गतिविधि और उर्वरता दोनों में सुधार होता है।

फायदे एक नजर में :

गुण	फ्लाई ऐश का प्रभाव
बनावट	सिल्ट जैसे कण, मिट्टी को हल्का बनाते हैं
जल धारण क्षमता	जल को रोकने की शक्ति बढ़ती है
pH संतुलन	अम्लीय मिट्टी को सुधारता है
पोषक तत्व	Zn, S, Fe, Ca, Mg, Mo जैसे तत्व प्रदान करता है
सूक्ष्मजीवों पर असर	वेदरिंग के बाद सूक्ष्मजीव सक्रिय होते हैं

फ्लाई ऐश की मात्रा और प्रयोग की विधि

मिट्टी का प्रकार	फ्लाई ऐश की मात्रा
बलुई (रेतीली) मिट्टी	10–25%
दोमट (medium) मिट्टी	5–15%
अम्लीय (acidic) मिट्टी	10–20%

'यह प्रतिशत मिट्टी के सूखे भार के अनुसार है। 100 किलो मिट्टी में 10: का अर्थ है 10 किलो फ्लाई ऐश मिलाना।

प्रयोग की विधियाँ :

- **सतही मिलावट :** फ्लाई ऐश को खेत की सतह पर बिखेरकर 15 20 सेमी गहराई तक जुताई करें।

खेत की तैयारी में : अंतिम जुताई के समय गोबर खाद या कम्पोस्ट के साथ मिलाकर उपयोग करें।

- **जैविक खाद के साथ :** 1:1 अनुपात में गोबर खाद/कम्पोस्ट के साथ मिलाए सूक्ष्मजीवों पर असर नहीं होता।

ध्यान देने योग्य बातें

- प्रयोग से पहले मिट्टी की जांच अवश्य कराएं।
- भारी धातुओं की अधिकता वाली फ्लाई ऐश का उपयोग न करें।
- अधिक मात्रा में प्रयोग करने से लवणीयता बढ़ सकती है हमेशा अनुशसित मात्रा में ही प्रयोग करें।
- वर्षा से पहले उपयोग करने से फ्लाई ऐश अधिक प्रभावी होती है।

निष्कर्ष

- फ्लाई ऐश एक ऐसा संसाधन है जिसे यदि विवेकपूर्ण तरीके से प्रयोग किया जाए तो यह मिट्टी की गुणवत्ता को सुधारने में अत्यत प्रभावी हो सकता है।
- इसके प्रयोग से जलधारण क्षमता, पोषक तत्वों की उपलब्धता, और मिट्टी की सरचना में सुधार आता है।
- यह पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में कम लागत वाला और पर्यावरण के अनुकूल विकल्प है। साथ ही यह कोयला आधारित उद्योगों से उत्पन्न अपशिष्ट के सुरक्षित निपटान में भी सहायता करता है।
- भविष्य की दृष्टि से, यदि फ्लाई ऐश के उपयोग को उचित दिशानिर्देशों और मिट्टी परीक्षण के आधार पर अपनाया जाए, तो यह भारत की टिकाऊ खेती की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हो सकता है।
- इसका प्रयोग वैज्ञानिक तरीकों से कर, किसान न केवल उत्पादन बढ़ा सकते हैं, बल्कि भूमि की दीर्घकालीन उर्वरता भी बनाए रख सकते हैं।

आँवला प्रसंस्करण तकनीक उद्यमिता विकास

गुंजन सनाढ्य, मुमल भारद्वाज एवं योगेन्द्र कुमार मीणा
कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा, प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

प्रकृति की देन आँवला स्वास्थ्य के लिए लाभदायक

आँवला भारत की प्रमुख औषधीय फसल है तथा हमारा देश विश्व में आँवले का सबसे बड़ा उत्पादक है, स्वास्थ्य की दृष्टि से आँवला विटामिन सी व फाइबर का अच्छा स्त्रोत होने के कारण स्ट्रटोकल उत्पादों में सबसे अधिक लोकप्रिय है ।

स्वास्थ्य और तंदुरुस्ती का रुझान : आँवला विटामिन सी और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होता है, जो इसे स्वास्थ्य के प्रति जागरुक उपभोक्ताओं के बीच एक लोकप्रिय विकल्प बनाता है। आँवला के स्वास्थ्य लाखों के बारे में बढ़ती जागरुकता के कारण आँवला आधारित उत्पादों की माँग बढ़ रही है।

पारंपरिक आयुर्वेदिक उपयोग : आँवला के औषधीय गुणों के कारण पारंपरिक आयुर्वेदिक चिकित्सा में इसके उपयोग का एक लंबा इतिहास रहा है। प्रा तिक और पारंपरिक उपचारों की माँग ने आँवला उत्पादों की लोकप्रियता में योगदान दिया है।

न्यूट्रास्युटिकल उद्योग का विकास : आँवला का उपयोग न्यूट्रास्युटिकज्स के उत्पादन में किया जाता है, जिसमें आहार पूरक और स्वास्थ्यवर्धक पेय शामिल हैं। बढ़ता न्यूट्रास्युटिकल उद्योग आँवला प्रसंस्करण व्यवसाययों के लिए कच्चे माल की आपूर्ति के अवसर पैदा करता है।

उत्पादों में बहुमुखी प्रतिभा : आँवला को विभिन्न उत्पादों में संसाधित किया जा सकता है, जिसमें आँवला जूस, आँवला पाउडर, आँवला कैंडी और आँवला–आधारित सप्लीमेंट शामिल हैं। आँवला की बहुमुखी प्रतिभा उद्यमियों को अपने उत्पादों की पेशकश में विविधता लाने की अनुमति देती है।

निर्यात के संभावना : आँवला उत्पादों में निर्यात के संभावना है, और आयुर्वेदिक तथा हर्बल उत्पादों के लिए अंतर्राष्ट्रीय बाजार का विस्तार हो रहा है। एक सुस्थापित आँवला प्रसंस्करण व्यवसाय निर्यात के अवसरों का लाभ उठा सकता है और ख़ारत के वैश्विक व्यापार में योगदान दे सकता है, किसानों की आय में वृद्धि : आँवला की खेती किसानों के लिए अतिरिक्त आय का स्त्रोत है। आँवला प्रसंस्करण व्यवसाय की स्थापना स्थानीय कृषक समुदायों की आर्थिक ख़लाई में योगदान दे सकती है।

सूखा प्रतिरोधी फसल : आँवला एक कठोर और सूखा प्रतिरोधी फसल है, जो इसे विख्रिन्न कृषि–जलवायु परिस्थितियों में खेती के लिए उपयुक्त बनाती है। यह लचीलापन फसल विफलता से जुड़े जोखिम कम करता है। नवीन उत्पाद विकास रू उद्यमी न आँवला–आधारित फॉर्मूलेशन, जैसे आँवला–युक्त स्नैक्स, पेय पदार्थ और कॉस्मेटिक उत्पाद, पेश करके नवीन उत्पाद विकास की संभावनाएँ तलाश सकाते हैं, जो उपभोकताओं की बदलती प्राथमिकताओं को पूरा करते हों।

पाककला अनुप्रयोग : आँवला का उपयोग पारंपरिक ख़ारतीय व्यंजनों में किया जा जाता है, और आँवला अचार, चटनी और सॉस जैसे पाक उत्पाद बनाने का अवसर है, जो प्रसंस्करण व्यवसाय में मूल्यवर्धन करता है।

आँवले के लाभ निम्न प्रकार हैं :

1. यह पाचन में लाभकारी तथा यह कृमि नाशक है।
2. अजीर्ण होने से रोकता है।
3. निरन्तर आँवले के सेवन से दिमाग को तरावट मिलती है।
4. आँवला खून साफ करता है।
5. आँवले के लगातार प्रयोग से बाल काले, चमकदार व मजबुत बनते हैं।

आँवला का मुरब्बा

सामग्री : आँवला– 1 कि.ग्रा., चीनी– 1.25–1.50 कि.ग्रा., फिटकरी– 20 ग्रा., साइट्रिक अम्ल– 3–5 ग्रा.

विधि :

1. अच्छे फलों को चयनित कर स्वच्छ पानी में 2–3 दिन तक पड़ा रहने दें।
2. फिर उसकी धुलाई करके स्टेन्लेस स्टील के कांटों से गुदाई कर लें।
3. गुदाई करते वक्त ध्यान रखें कि काँटे की नोक आँवले की गुठली तक पहुँच जाये।
4. गुदाई किये हुए आँवले को 2 प्रतिशत नमक के घोल में रखते जायें, 2–3 दिन तक पानी में पड़ा रहने दें।
5. तत्पश्चात आँवले की स्वच्छ पानी में धुलाई कर 2 प्रतिशत फिटकरी का घोल में मुलायम होने तक आँच पर उबालें ।
6. मुलायम होने के बाद आँच से उतार कर स्वच्छ पानी से 2–3 बार धो लें।
7. फिर साफ स्टील के बर्तन में चीनी की तह बनाकर, ऊपर आँवले की तह बनाये, फिर आँवले की तह के ऊपर चीनी की तह बनायें इस प्रकार ऊपर नीचे आँवले व चीनी की तह जमाकर रख दें।
8. दूसरे दिन जब शक्कर गलकर चाशनी बन जाये तो आँवलों को बाहर निकालकर चीनी की चाशनी को गरम करें, उबाल आने लगे तो उसमें साइट्रिक अम्ल मिला दें, उसके बाद चाशनी में आँवले को डालकर रख दें।
9. चाशनी को दो या तीन दिन के बाद पुनः आंच पर चढ़ाये एवं इसी तरह से 2–3 बार यह क्रिया दोहरायें।
10. जब चाशनी शहर के समान हो जाएतो उसके बाद मुरब्बा की पैकिंग कर दें।

आँवला का लड्डू

सामग्री : आँवला गुदा– 1 कि.ग्रा., चीनी– 1.25 कि.ग्रा., पानी– 0.5 लीटर, मिश्री मेवा सूखा– 200 ग्राम बादाम, चिरौंजी, काजू साइट्रिक अम्ल /नींबू रस– 5 ग्राम

विधि :

1. आँवले को कद्दूकस करके एक दिन के लिए 2 प्रतिशत नमक के घोल में रख कर छोड़ दें।
2. दूसरे दिन पानी बदलकर, दूसरे पानी में कसे हुए गुदा को 2 प्रतिशत फिटकरी डालकर गर्म करें।
3. गुड़ा मुलायम होने पर आँच से उतारकर ठंडा पानी डालकर निचोड़ लें।

4. चीनी में पानी मिलाकर चाशनी बनाये, उबाल आने लगे तब साइट्रिक अम्ल मिलायें।
5. गुदा को चाशनी में डालकर गाढ़ा होने तक हिलाते रहें और मिश्री मेवा डाल दें। फिर जरूरत के मुताबिक लड्डू बना लें।

आँवला च्यवनप्राश

सामग्री :

आँवला : 8 कि.ग्रा. (की तैयारी पिट्ठी 6 कि.ग्रा.), शक्कर– 9 कि.ग्रा. (½ गुनी), अश्वगंधा– 60 ग्राम, शतावरी– 60 ग्राम, इलायची छोटी– 60 ग्राम, इलायची बड़ी– 60 ग्राम, जायफल– 10 ग्राम, जावेत्री– 10 ग्राम, पीपल छोटी– 150 ग्राम, दालचीनी– 60 ग्राम, नागकेशर– 60 ग्राम, गोखरू बड़ी– 50 ग्राम, कपूर देशी ½ ग्राम, केशर– 1 ग्राम, चाँदी के वर्क– 30 ग्राम नोट रू सभी औषधियों को बारीक पीस लें।

विधि :

1. आँवलों को साफ पानी से धोकर 8 कि.ग्रा. आँवले में 1.5 लीटर पानी डालकर अच्छी तरह उवाल लें।
2. फिर उसकी गुठली निकालकर उबालें और स्टैनलेस स्टील की जाली पर कसें गुदा पीट्ठी बना लें।
3. 8 कि.ग्रा. आँवले से तैयार पिट्ठी (करीब 6 कि.ग्रा. पिट्ठी) में शक्कर, 9 कि.ग्रा. डालकर गर्म करें और उबाल आने दें।
4. गाढ़ा होने पर आँच बन्द करके उसमें ठण्डा होने से पहले उपरोक्त औषधियों का पाउडर मिला दें, चाँदी वर्क 30 नाग भी मिला दें। गरम–गरम को डिब्बों में भर दें व ठण्डा होने तक ढक्कन खुला छोड़ दें।

आँवला कैण्डी

सामग्री : आँवला– 1 कि.ग्रा., पानी– 1 कि.ग्रा. ग्राम, शक्कर–1 कि.ग्रा., फिटकरी 50 ग्राम

विधि :

1. आँवलों को एक किलो पानी में 25 ग्राम फिटकरी डालकर 3 दिन के लिए भिगों दें एवं रोज हिलाते रहें।
2. पानी में धोकर 2 मिनट के लिए उबालें व 10 मिनट ढ़ककर रख दें। फॉके अलग करे व धूप में 5–7 मिनट तक सुखायें।
3. 1 किलो पानी में 1 किलो शक्कर डालकर उबालें, तथा आँवले की फॉके डालकर आग से उतार लें।
4. अगले दिन आँवले डालकर अलग करें व दो तार की चाशनी बनाकर आँवले डालकर उबालें। थोड़ी कडक चाशनी होने पर आग से उतारे व छाया में सुखा लें। यह कैन्डी मधुमेह के रोगी भी आसानी से खा सकते हैं, क्योंकि मुरब्बे के अनुपात में इसमें शक्कर की मात्रा कम रहती हैं।

आँवला अचार

सामग्री : आँवला– 1 किलो, राई– 100 ग्राम, हल्दी– 20 ग्राम, मैथी– 100 ग्राम, सौंफ– 100 ग्राम, हींग– 100 ग्राम, मिर्च – 50 ग्राम, तेल – 1 किलो, नमक– स्वादानुसार

विधि :

1. आँवले को 5–7 मिनट तक उबालकर फांके निकाल लें व गुठली अलग कर लें।
2. सभी मसालें मोटे पीस कर आँवलों में मिलायें।
3. तेल गर्म कर के हींग डालें व ठण्डा होने पर आँवलों में मिला दें। 3 दिन धूप में रखें। अचार तैयार है।

आँवला लौंजी

सामग्री : आँवला– 1 किलो, शक्कर– 750 ग्राम, नमक– 10 ग्राम, काली मिर्च– 10 ग्राम, इलायची– 5 ग्राम

विधि :

1. आँवले को पीसकर लच्छे बनाये, उसमें शक्कर डालकर आग पर चढ़ावें।
2. जब शक्कर आँवला एक हो जायें और बर्तन छोड़ने लगे तब नमक, लाल मिर्च, काली मिर्च व इलायची पीसकर मिलायें। ठण्डा होने पर काँच की बरनी में भरें।

आँवला स्क्वैश

सामग्री : आँवला– 2 किलो, शक्कर– 1 किलो, पानी– 1/2 किलो, पोटेशियम मेटा बाई सल्फाइट– 2–3 ग्राम, हरा रंग– 3–4 बूंद

विधि :

1. आँवले को धोकर कपड़े से पोछलें। छोटे–छोटे टुकडे काटकर गुठली अलग करें व रस निकाल लें।
2. पानी में शक्कर डालकर 5 मिनट तक उबालें। ठण्डा होने पर रस मिलायें। पोटेशियम मैटा बाई सल्फाइट व रंग डालकर कांच की बोतल में भर लें।

आँवला पाचक

सामग्री : आँवला– 1 किलो, काला नमक, सफेद नमक, सैंदा नमक, काली मिर्च, बूरा स्वादानुसार

विधि :

1. आँवले को धोकर पौंछकर कस लें।
2. कसे हुये आँवले में सफेद नमक, काला नमक, सैंदा नमक, काली मिर्च, व बूरा मिलाकर छाया में सुखायें।

आँवला बर्फी

सामग्री : आँवला– 1 किलो, मावा– ½ किलो, देशी घी– ¼ किलो, शक्कर– 1 किलो, पानी– ½ कप, नारियल बुरादा– ½ किलो, इलायची– 5–7 ग्राम

विधि :

1. आँवले को 10–15 मिनट उबालकर पानी से निकालें।
2. आँवलों को धोकर पौंछकर कस लें व देशी घी में खूनें।

3. शक्कर में एक दो कप पानी डालकर 2 तार की चाशनी बनाये, सभी सामग्री मिलाकर थाली में घी लगाकर बरफी जमायें। नारियल बुरादा उपर से बुरक कर बरफी के आकार में काटें।

आँवले का बालों का पाउडर व तेल

सामग्री : आँवला का सूखा पाउडर 250 ग्राम, हीना 250 ग्राम, मैथी पाउडर 250 ग्राम, गुड़हल के पत्ते का पाउडर 100 आँवला गोद ग्राम, मीठे नीम के पत्तों का पाउडर 100 ग्राम, कलौंजी 100 ग्राम, रीठा 100 ग्राम, शिकाकाई 100 ग्राम सभी सामग्रीयों को मिलाकर मिक्सी में पीस लें तथा सूखे जार में भरकर रख लें, यदि इस सामग्री को 5 लीटर सरसों तेल में 5 घण्टे पकाकर छानकर तेल बनता है।

आँवला जैम

सामग्री : आँवला 1 कि.ग्रा., चीनी– 875 ग्राम, साइट्रिक एसिड– ¼ चाय का चम्मच

विधि :

1. आँवलों को धोकर उबाल लें।
2. उबले हुये आँवलों को मिक्सी में पीस कर छलनी से छान लें ताकि रेशे अलग हो जाये।
3. पीसे हुये मिश्रण में थोड़ा पानी मिलाकर आग पर चढ़ायें। शक्कर व साइट्रिक एसिड मिलायें।
4. शक्कर घुलने के बाद तेज आँच पर पकायें।
5. जैम की तरह गाढ़ा होने पर आँच से उतारें। गर्म–गर्म ही बोतल में भरें।

आँवला जैली

सामग्री : आँवला– 1 किलो, चीनी– 750 ग्राम / पेक्टिन की मात्रानुसार।

विधि :

1. सबसे पहले आँवलों को धोकर छोटे पतले टुकड़ों में काट लें।
2. इन टुकड़ों को पतीले में डालकर आँवलें डूब जाने जितना पानी डालें। करीब 20–25 मिनिट तक पकायें।
3. आँच से उतार कर आँवलों के टुकड़ों को बिना दबाव के छलनी में से छान लें। छने हुए रस को अलग रख दें।
4. रस को मिलाकर रस में पेक्टिन की जाँच करें।
5. पेक्टिन की मात्रा के अनुसार रस में चीनी मिलाकर आग पर चढ़ाएँ। पकाते समय ज्यादा झाग न बनने दें।
6. मिश्रण को जब तक पकायें जब तक शीट टेस्ट न देने लगे।
7. तैयार जैली को गर्म गर्म ही बोतलों में भरें।

कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा द्वारा आँवला प्रसंस्करण में उद्यमिता विकास

कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा पर आँवला प्रसंस्करण पर कौशल विकास प्रशिक्षण विगत 10 वर्षों से करवाए जा रहे हैं जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण युवाओं में उद्यमिता विकास कर उन्हे स्वरोजगार की मुख्य धारा से जोड़ने का है। इन प्रशिक्षणों में आँवले के विभिन्न उत्पादों के अलावा उनकी पैकेजिंग लेवलिंग उद्यम हेतु रजिस्ट्रेशन तथा उद्योग स्थापित करने हेतु विभिन्न सरकारी योजनाओं में दी जाने वाली सब्सीडी की जानकारी भी दी जाती है जिससे स्वयं सहायता समूह की महिलाएँ युवा इस उद्यम को पूर्णतः अपना सकें। वर्तमान में 30 से अधिक ग्रामीण उद्यमी कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा के द्वारा आँवला प्रसंस्करण में तैयार किए जा चुके हैं।

कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा के सफल उद्यमी (आँवला प्रसंस्करण)

उद्यमी का नाम	व्यवसायिक फर्म	सम्पर्क सूत्र
श्री हेमन्त दिक्षित	हेल्दी एण्ड हाईजीन फूड़ प्रोड़., कोटा	7014834551
श्रीमती हेमलता सोनगरा	तनवी फूड़ प्रोडक्ट्स, कोटा	9461101382
श्रीमती सुमन भार्मा	रि ा फूड़ प्रोडक्ट्स, कोटा	9460853746
श्री प्रितम मालव	कोटा आँवला प्रोडक्ट्स, कोटा	8387919820
श्रीमती वंदना गौड़	पौश्टिक फूड्स, कुन्हाड़ी, कोटा	7014211537

आँवला प्रसंस्करण उद्यम की आर्थिकी

लघु इकाई द्वारा एक के लिये आँवला प्रसंस्करण की आर्थिकी (जैम, जैली, कैण्डी, मुरब्बा, जूस)	आँवला : 75 क्विंटल तैयार उत्पाद : 125 क्विंटल कुल लागत : 12,50,000 आय : 25,00,000 लाभ : 12,50,000

आँवला प्रसंस्करण उद्यम हेतु आवश्यक मशीनें

आँवला ग्रेडिंग

आँवला ब्रेकिंग

आँवला ज्यूसर

छतों पर बागवानी : शहरी पारिस्थितिकी तंत्र में योगदान

मयंक शर्मा, कुलदीप हरियाणा एवं कुलदीप सिंह राजावत
कृषि महाविद्यालय, जोधपुर, कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर

छतों पर बागवानी एक ऐसी कृषि पद्धति है जिसमें शहरी भवनों की छतों का उपयोग खाद्य उत्पादन के लिए किया जाता है। यह प्रणाली पारंपरिक भूमि–आधारित खेती के विकल्प के रूप में उभर रही है, विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहाँ भूमि की उपलब्धता सीमित है। छतों पर बागवानी में सब्जियाँ, फल, औषधीय पौधे और कभी–कभी पशुपालन भी शामिल होता है, जिसे मिट्टी आधारित, हाइड्रोपोनिक या एक्वापोनिक प्रणालियों के माध्यम से संचालित किया जा सकता है।

तेजी से बढ़ते शहरीकरण, जनसंख्या दबाव और जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में, शहरी क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा और पोषण सुनिश्चित करना एक बड़ी चुनौती बन चुका है। पारंपरिक आपूर्ति श्रृंखलाओं पर अत्यधिक निर्भरता, परिवहन लागत, खाद्य अपशिष्ट और पोषण असमानता जैसी समस्याएँ शहरी जीवन को प्रभावित कर रही हैं। ऐसे में छतों पर बागवानी एक रणनीतिक समाधान के रूप में सामने आती है, जो न केवल स्थानीय खाद्य उत्पादन को बढ़ावा देती है, बल्कि पर्यावरणीय स्थिरता, सामाजिक समावेशन और सामुदायिक सशक्तिकरण को भी प्रोत्साहित करती है। देश की जनसंख्या में निरंतर वृद्धि के साथ–साथ खाद्य पदार्थों की मांग और उन पर होने वाला व्यय भी तेजी से बढ़ रहा है। दूसरी ओर, कृषि योग्य भूमि का तेजी से आवासीय, वाणिज्यिक और औद्योगिक उपयोग में परिवर्तन हो रहा है, जिससे पारंपरिक कृषि उत्पादन की संभावनाएँ सीमित होती जा रही हैं। इसके अतिरिक्त, फलों को कृत्रिम रूप से पकाने हेतु हानिकारक रसायनों का प्रयोग, उत्पादन बढ़ाने के लिए अकार्बनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग खाद्य प्रदूषण की गंभीर समस्या को जन्म दे रहा है। यह प्रणाली शहरी पारिस्थितिकी तंत्र को सुदृढ़ करने, जैव विविधता बढ़ाने, वर्षा जल संचयन और ऊष्मा द्वीप प्रभाव को कम करने में भी सहायक सिद्ध हो सकती है।

छतों पर बागवानी के प्रकार

छतों पर बागवानी की दो मुख्य प्रणालियाँ होती हैं. ''विस्तृत (Extensive)*' और ''गहन (Intensive)'' हरित छत प्रणालियाँ।

विस्तृत हरित छतें हल्के भार वाली होती हैं, जिनमें सीमित प्रकार के पौधे लगाए जाते हैं और रखरखाव की आवश्यकता न्यूनतम होती है। इन छतों में मिट्टी की गहराई सामान्यतः 5.15 सेमी (2.6 इंच) होती है, जिससे भार 70.170 किग्रा/वर्ग मीटर (14.35 पाउंड/वर्ग फुट) तक बढ़ता है। इनमें सामान्यतः घास और औषधीय पौधे लगाए जाते हैं। इनकी विशेषताएँ हैं.कम प्रारंभिक लागत, सीमित पौध विविधता और न्यूनतम रखरखाव। गहन हरित छतें अपेक्षा त भारी होती हैं, जिनमें मिट्टी की गहराई 20.60 सेमी (8.24 इंच) तक होती है और संतृप्त अवस्था में भार 290.967.7 किग्रा/वर्ग मीटर (60.200 पाउंड/वर्ग फुट) तक बढ़ सकता है। इन छतों पर वृक्ष, झाड़ियाँ और विविध प्रकार के पौधे लगाए जाते हैं। ये छतें मानव उपयोग के लिए सुलभ होती हैं और इनमें जटिल सिंचाई एवं जल निकासी प्रणाली, अधिक पौध विविधता और उच्च रखरखाव की आवश्यकता होती है।

उपयोग और स्वरूप के आधार पर छतों पर बागवानी को चार रूपों में वर्गीकृत किया जा सकता है :

1. विस्तृत हरित छतें
2. विस्तृत छतें जिनमें कुछ गहन पौधारोपण किया गया हो
3. स्थायी एवं डिजाइनयुक्त गमलों में पौधारोपण
4. चलायमान गमलों में पौधारोपण

छतों पर बागवानी हेतु फल एवं सब्जियों के चयन का मापदंड

छतों पर बागवानी के लिए फल और सब्जियों का चयन कई कारकों पर निर्भर करता है, जिनमें पौधों का आकार, सूखा सहनशीलता, pH अनुकूलता, सूर्य प्रकाश की उपलब्धता और छत की संरचना प्रमुख हैं। इस विशेष पर्यावरण में कौन–से पौधे बेहतर प्रदर्शन करेंगे, यह जानने के लिए अनुभवी माली या उद्यान विशेषज्ञ की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। कम रखरखाव वाले पौधों को बहु–स्तरीय हल्की संरचना में उगाया जाता है, जिसमें जड़–प्रतिरोधक झिल्ली, जल निकासी प्रणाली और पारंपरिक मिट्टी की तुलना में हल्का उगाने का माध्यम शामिल होता है। छतों पर बागवानी में सिंचाई की तीव्रता एक निर्णायक कारक होती है, और जलापूर्ति की आवृत्ति यह निर्धारित करती है कि पौधे स्वस्थ रूप से विकसित होंगे या नहीं। अतः सूखा सहनशील प्रजातियाँ छतों पर बागवानी के लिए अधिक उपयुक्त मानी जाती हैं।

मिट्टी की अम्लता (pH) भी एक महत्वपूर्ण कारक है, क्योंकि अम्लप्रिय और अम्लविरोधी पौधे एक ही माध्यम में सह–अस्तित्व नहीं रख सकते। इसके अतिरिक्त, दीवार के समीप स्थित पौधों में सूर्य की तीव्र गर्मी के कारण मुरझाने और सूखने की प्रवृत्ति अधिक होती है, जबकि कुछ ही दूरी पर स्थित पौधे अपेक्षाकृत अधिक समय तक स्वस्थ रहते हैं। छतों पर बागवानी हेतु उन फल एवं सब्जियों का चयन किया जाना चाहिए जिनका भार कम हो और जो सीमित स्थान में भी अच्छी उपज दे सकें। उदाहरणस्वरूप, फल प्रजातियों में नींबू वर्गीय फल, अनार, स्ट्राबेरी, रास्पबेरी, अमरूद, ड्रैगन फ्रूट, करोंदा, बौना पपीता और बौना केला उपयुक्त माने जाते हैं। सब्जी प्रजातियों में टमाटर, बैंगन, मिर्च, प्याज, मूली, गाजर, पत्तेदार सब्जियाँ, ककड़ी वर्गीय सब्जियाँ, बीन्स, फूलगोभी, बंदगोभी, भिंडी और मटर जैसी फसलें छतों पर सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं।

छतों पर बागवानी के लाभ और सीमाएँ

लाभ

छतों पर बागवानी शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में बहुआयामी लाभ प्रदान करती है। हरित छतें वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण करती हैं और वायु प्रदूषण को कम करने में सहायक होती हैं। यह प्रणाली वर्षा जल बहाव को नियंत्रित करती है, जिससे बाढ़ और जल प्रदूषण की समस्या घटती है। भवन और उसके आसपास के क्षेत्र की सौंदर्यात्मकता में वृद्धि होती है, जिससे संपत्ति का मूल्य भी बढ़ सकता है। आर्थिक दृष्टि से यह लाभकारी है क्योंकि इसके लिए अतिरिक्त भूमि की आवश्यकता नहीं होती। गर्मियों में भवन के आसपास का तापमान कम किया जा सकता है, जबकि सर्दियों में यह भवन को अतिरिक्त ऊष्मा से संरक्षित करता है। छत की आयु भी बढ़ाई जा सकती है क्योंकि यह विभिन्न मौसमीय प्रभावों से संरक्षित रहती है। ऊर्जा की बचत होती है क्योंकि हीटिंग और कूलिंग पर होने वाला व्यय घटता है। साथ ही, छत का उपयोग खाद्य उत्पादन के लिए किया जा सकता है, जिससे स्थानीय स्तर पर पोषण सुरक्षा को बढ़ावा मिलता है।

सीमाएँ

हालाँकि, छतों पर बागवानी के साथ कुछ प्रमुख सीमाएँ भी जुड़ी हुई हैं। इसके लिए उपयुक्त ढलान वाली छत आवश्यक होती है, जो अक्सर उपलब्ध नहीं होती, और छोटे भवनों पर ऊँचे भवनों की छाया एक बड़ी बाधा बनती है। छत को बागवानी से पहले ठीक प्रकार से जलरोधक

बनाना आवश्यक है, अन्यथा रिसाव की समस्या उत्पन्न हो सकती है। यदि छत पर उचित ढलान नहीं है तो वर्षा के दौरान पौधों के बीच जल जमाव हो सकता है। छत पर जमीन की तुलना में हवा की गति अधिक होती है, जिससे पौधों को क्षति से बचाने के लिए विशेष सुरक्षा की आवश्यकता होती है। सूखे पत्तों के झड़ने के कारण बार–बार सफाई और रखरखाव की आवश्यकता पड़ सकती है। छतों पर कीट और रोगों की संभावना अधिक होती है, जिससे नियमित निगरानी और उपचार आवश्यक हो जाता है। इसके अलावा, गुणवत्तापूर्ण बीज, रोपण सामग्री और उपयुक्त किस्मों की उपलब्धता सीमित होती है। सबसे महत्वपूर्ण बाधा यह है कि शहरी निम्न–आय वर्ग को उच्च मूल्य वाली भूमि (जैसे छत) तक सीमित पहुँच प्राप्त होती है, जिससे वे अपनी कृषि क्षमताओं का पूर्ण उपयोग नहीं कर पाते।

छतों पर बागवानी को सुधारने की रणनीतियाँ

छतों पर बागवानी को सफलतापूर्वक लागू करने और व्यापक स्तर पर प्रोत्साहित करने के लिए ठोस राजनीतिक प्रतिबद्धता और स्पष्ट नीतिगत दिशा–निर्देश आवश्यक हैं। सरकार और संबंधित संगठनों के प्रतिनिधियों को सम्मिलित करते हुए एक समिति का गठन किया जाना चाहिए, जो संभावित रणनीतियों की पहचान और उनके कार्यान्वयन को सुनिश्चित करे। परियोजनाओं को उचित ठहराने के लिए वित्तीय, आर्थिक और सामाजिक दृष्टिकोण से विस्तृत विश्लेषण किया जाना चाहिए। भवन निर्माण संबंधी नियमों और कानूनों में संशोधन कर छतों पर बागवानी के भार को ध्यान में रखा जाना चाहिए। नए भवनों की नींव मजबूत होनी चाहिए और स्तंभ इतने सुदृढ़ हों कि अतिरिक्त भार को सहन कर सकें। छतों को इस प्रकार ढलानयुक्त बनाया जाना चाहिए कि वर्षा का जल शीघ्र और सरलता से नीचे प्रवाहित हो सके। परियोजना को बहुआयामी दृष्टिकोण से संचालित किया जाना चाहिए। इसके लिए एक पृथक विभाग का गठन किया जाए, जो आवास, सेवाओं, पर्यावरण और नियोजन प्राधिकरण के बीच समन्वय स्थापित करे। अंततः भूमि की कमी की समस्या को उचित नीतिगत रणनीतियों के माध्यम से संबोधित किया जा सकता है।

राजस्थान में रूफटॉप गार्डनिंग के लिए सरकारी नीति

राजस्थान सरकार हाल के वर्षों में शहरी कृषि को बढ़ावा देने के लिए रूफटॉप गार्डनिंग जैसी तकनीकों पर विशेष ध्यान दे रही है। यद्यपि राज्य में अभी तक छतों पर बागवानी के लिए कोई व्यापक राज्य–स्तरीय नीति लागू नहीं है, फिर भी सरकार ने शहरी क्षेत्रों में लोगों को छतों पर सब्जियों के उत्पादन के लिए प्रेरित करने हेतु कई महत्वपूर्ण पहलें शुरू की हैं। सबसे प्रमुख पहल "टॉप फार्मिंग परियोजना" है, जिसे जयपुर में लागू किया गया है। इस परियोजना के अंतर्गत राज्य सरकार छत पर सब्जियों की खेती हेतु आवश्यक इकाई स्थापित करने पर 70 प्रतिशत सब्सिडी प्रदान करती है। यह योजना जयपुर नगर निगम क्षेत्र के निजी आवासीय भवनों के लिए उपलब्ध है और आवेदन एक निर्धारित अवधि में ऑफलाइन माध्यम से स्वीकार किए जाते हैं। इस योजना के लिए न्यूनतम 200 वर्ग फीट छत का क्षेत्र आवश्यक है। एक इकाई की कुल लागत लगभग रू. 53,619 है, जिसमें सरकार द्वारा रू. 37,534 की सहायता दी जाती है, जबकि 16,085 लाभार्थी को स्वयं वहन करना होता है। इसके साथ ही, राजस्थान का बागवानी विभाग राष्ट्रीय बागवानी मिशन के अंतर्गत संरक्षित खेती को प्रोत्साहित कर रहा है, जिससे ग्रीन हाउस, पॉलीहाउस और अन्य संरक्षित व्यवस्थाओं को बढ़ावा मिलता है। यद्यपि यह सीधे रूफटॉप गार्डनिंग पर केंद्रित नहीं है, लेकिन शहरी क्षेत्रों में सीमित भूमि वाले परिवारों के लिए यह एक सहायक नीति के रूप में कार्य करता है।

"अभिनव कृषि" अंकवार प्रकाशित होने वाली विषय सामग्री

अंक	प्रकाशन माह	विषय–विशेषांक
1	जून	खरीफ फसल विशेषांक, खरीफ फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार, प्रबंधन, मृदा एवं जल संरक्षण
2	सितम्बर	रबी फसल विशेषांक, रबी फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार प्रबंधन, उन्नत कृषि उपकरण
3	दिसम्बर	सिंचाई प्रबंधन, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, जैविक खेती, समन्वित कृषि प्रणाली, आधुनिक डेयरी, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन
4	मार्च	जायद खेती, संरक्षित खेती, हाई–टेक बागवानी, फल–फूल, सब्जी उत्पादन, मृदा प्रबंधन, पशुपालन प्रबंधन, फल सब्जी परिरक्षण एवं खाद्य प्रसंस्करण

फूल उद्योग के लिए पुष्प रंजन नई तकनीक

आशुतोष मिश्रा एवं सुनीता कुमारी
उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय झालावाड़, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

आज के दौर में पुष्पों की सुंदरता और विशिष्टता के कारण घरेलू और निर्यात दोनों बाजारों में मांग दिन प्रति दिन बढ़ रही हैं, लेकिन वर्ष भर रंगीन पुष्प बाजार में उपलब्ध नहीं रह पाते हैं। सफेद पुष्पों और कुछ फूलों में कुछ रंगों की उपलब्धता नहीं होती है, जैसे कि गुलाब, कारनेशन और ग्लेडियोलस में नीले, काले और हरे रंग के फूल प्रकृति में उपलब्ध नहीं होते हैं। रजनीगंधा में सिर्फ सफेद रंग के फूल होते हैं। सफेद गुलाब, कारनेशन, गुलदाउदी, रजनीगंधा, ग्लेडियोलस आदि को पुष्प रंजन करके मांग के अनुसार रंगीन फूलों की मांग को वर्ष भर पूरा किया जा सकता हैं। पुष्प रंजन तकनीक, फूल उद्योग में एक उभरती तकनीक है, इस तकनीक के द्वारा सफेद फूलों को कटाई–पश्चात कृत्रिम रंगों से रंगकर उनकी सौंदर्यता और बाजार मूल्य को बढ़ाया जाता है। सफेद फूल, अपने तटस्थ रंगद्रव्य के कारण, अतिरिक्त रंगों को जीवंत रंगों में अवशोषित करके कैनवास के रूप में प्रदर्शित करने का कार्य करती हैं। यह तकनीक न केवल फूल विक्रेताओं और उपभोक्ताओं के लिए नवीन रंगों का विस्तार करती है, बल्कि उपभोक्ताओं की माँग के अनुसार सालभर रंग के अनुसार फूल उपलब्ध कराने में भी सक्षम है, जिससे आयोजनों, त्योहारों और व्यक्तिगत प्राथमिकताओं के अनुसार फूलों से रंग थीम बनाया जा सकता हैं।

पुष्प रंजन तकनीक, बाजार में उपभोक्ताओं की रुचि के अनुसार बिना किसी आनुवंशिक संशोधन और जटिल अनुसंधान के नवीनतम रंगों का विकल्प देती है, जो कि पुष्प विन्यास और सजावट में विविधता लाने का एक प्रभावी समाधान है। यह तकनीक आमतौर पर सफेद कार्नेशन, गुलाब, गुलदाउदी और ग्लेडियोलस, रजनीगंधा जैसे के फूलों में उपयोग किया जाता हैं। इस तकनीक में सफेद फूलों को खाद्य रंग खाद्य रंग जैसे एप्पल ग्रीन, लेमन येलो, ब्लू, पिंक, ऑरेंज रेड व अन्य प्रभावी रंग आदी को पानी में घोल कर पुष्प का तना रखा या डीप करते है। रंगीन घोल पुष्प के तने से होते हुए पंखुरियों को रंगने का कार्य करता है। यह तकनीक, आधुनिक उपभोक्ता रुझानों के साथ तालमेल बिठाते हुए पारंपरिक फूलों की किस्मों की व्यावसायिक क्षमता को बढ़ा रही है।

- **पुष्प उद्योग में पुष्प रंजन की आवश्यकता :** वैश्विक पुष्प उद्योग का विकास पुष्प उपभोक्ताओं, आयोजन आयोजकों और पुष्प विक्रेताओं की माँग के अनुसार निरंतर विकास के आवश्यकता हो रही है। विभिन्न नवाचारों में, विशेष रूप से सफेद फूलों की रंजन तकनीक की आवश्यकताओं को निम्नलिखित बिंदुओ के माध्यम से समझाया जा रहा है:
- **सुन्दरता में वृद्धि :** प्राकृतिक फूल अपनी आनुवंशिक रंग सीमा द्वारा सीमित होते हैं। पुष्प की रंजक तकनीक के माध्यम से अपरंपरागत और प्राकृतिक रूप से अनुपलब्ध रंग भी विकसित करके पुष्प विन्यास, सजावट को अधिक आकर्षक बना सकते हैं।
- **बाजार की माँग को पूरा करना :** शादियों, कॉर्पोरेट समारोहों और त्योहारों जैसे आयोजनों में अक्सर विशिष्ट रंग थीम (जैसे, नीला, बैंगनी, काला) वाले फूलों की आवश्यकता होती है। फूलों की रंगाई ग्राहकों की पसंद के अनुसार जल्दी, आसान और किफायती समाधान प्रदान करती है।
- **व्यावसायिक मूल्य में वृद्धि :** रंगीन किस्मों की तुलना में सफेद फूलों की बाजार में कीमत कम होती है। पुष्प रंजक तकनीक के माध्यम से, इन फूलों की व्यावसायिक मांग व मूल्य में वृद्धि होती है।
- **कटाई के बाद होने वाले नुकसान को कम करना :** फूलों की रंजक तकनीक का उपयोग करके अधिक और न बिकने वाले सफेद फूलों को नए उत्पादों में बदलकर बाजारों में बिक्री की संभावना में वृद्धि होती है।
- **मौसमी और थीम–आधारित डिजाइन बनाना :** रजक तकनीक के माध्यम से वैलेंटाइन डे (नीले गुलाब), स्वतंत्रता दिवस (तिरंगे फूल), और थीम वाले आयोजनों जैसे अवसरों के लिए, उन रंगों के प्राकृतिक फूलों का इंतजार किए बिना, थीम–आधारित पुष्प उत्पादों का विकास किया जा सकता है।
- **पुष्प रंजन तकनीक के पीछे का विज्ञान :** इस तकनीक में प्राकृतिक रंग का उपयोग किया जाता है जिसे पुष्प की संवहनी प्रणाली द्वारा अवशोषित किया जाता है। रंग आमतौर पर पानी में घुलनशील घोल होता है जिसे पुष्प तने के द्वारा अवशोषित किया जाता है, जिससे यह पंखुड़ियों को रंगीन बना देता है। रंग की तीव्रता और अवधि फूल के प्रकार, रंग की सांद्रता पर निर्भर करती है।

पुष्प रंजन तकनीक के लाभ :

- रंगों के विकल्पों में वृद्धि
- पुष्प सुंदरता में वृद्धि
- पर्यावरण अनुकूलन
- वर्ष भर फूलों के वांछित रंगों को उपलब्धता
- कम लागत में ज्यादा मुनाफा

पुष्प की रंजन के लिए उपयुक्त फूलों के प्रकार : पुष्प के रंजन तकनीक सामान्य तौर सफेद या हलके रंग के फूलों में के जाती हैं। पुष्प रंजन तकनीक के माध्यम से सफेद या हलके रंग के गुलाब, कारनेशन, ऑर्किड, रजनीगंधा, गुलदाउदी आदी के किस्मों का चुनाव किया जाता हैं।

पुष्प की रंजन प्रक्रिया : पुष्प की रंजन प्रक्रिया को निम्न बिंदुओ के माध्यम से सरलता से समझाया जा सकता हैं:

- **पुष्प रंजन के लिए तैयारी :** फूलों को रंजन के लिए पुष्प तनों को बाजार की मांग के अनुसार लम्बाई में कटा जाता हैं। उसके पश्चात पुष्प तने की नीचे की पत्तियों को हटा दिया जाता है।
- **रंग का प्रयोग :** पुष्प रंजन के लिए चुनाव किये हुए पुष्प को रंग से बने घोल में डुबो दिया जाता हैं ताकि रंग संवहनी तंत्र के माध्यम से अवशोषित हो कर पुष्प की पंखुरियो तक पहुच सके।
- **पुष्प में रंग का विकास :** पुष्प में रंग का विकास समय के साथ होता है, जो फूल के प्रकार, रंग की सांद्रता और संपर्क की अवधि जैसे कारकों पर निर्भर करता है।

चुनौतियाँ : पुष्प रंजन के कई लाभ तो हैं, लेकिन कुछ चुनौतियाँ भी हैं जिन पर विचार करना होगा, जैसे :

- **रंग की एकरूपता :** एक समान रंग की गुणवत्ता सुनिश्चित करना एक चुनौती है।
- पुष्प रंजन के बाद फूलों की ताजगी बनाए रखना।
- **फूलों की गुणवत्ता :** पुष्प रंजन तकनीक फूलों की गुणवत्ता और स्थायित्व को प्रभावित कर सकती है, और शोधकार्ताओं को रंगे हुए पुष्प की गुणवता सुनिश्चित करने के लिए शोध करने चाहिए।

शोध और भविष्य की दिशाएँ

शोध के माध्यम से हर चुनौती का समाधान किया जा सकता है, ऐसे ही समाधान की तरफ एक कदम बढाया गया। उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय झालावाड़ के द्वारा रजनीगंधा के फूल में पुष्प रंजन विषय पर वर्ष 2021 में शोध किया गया। इस शोध के लिए खाद्य रंग जैसे ब्लू, टोमेटो रेड और एप्पल ग्रीन का उपयोग अलग–अलग सांद्रता में उपयोग किया गया और परिणाम में पाया गया कि खाद्य रंग की उच्च सांद्रता के घोल में फूल का गहरा रंग प्राप्त हुआ, लेकिन कम सांद्रता के घोल में रजनीगंधा के फूल का हल्का रंग प्राप्त हुआ। इसी के साथ ये भी परिणाम प्राप्त हुआ कि खाद्य रंग की कम सांद्रता के घोल में रजनीगंधा के फूलों में एकसमान रूप से वितरण होता हैं।

फोटो 1: प्रयोगशाला में रजनीगंधा के उपचारित पुष्प

फोटो 2 : विभिन्न सांद्रता की डाई से उपचारित करने के पश्चात् रजनीगंधा के पुष्प का रंग

अंततः, फूलों की दुनिया में हमेशा से रंगों का विशेष महत्व रहा है। परंपरागत रूप से, हम फूलों को उनके प्राकृतिक रंगों में ही देखते आए हैं, लेकिन अब एक नई तकनीक पुष्प रंजक ने इस सोच को बदल दिया है। यह तकनीक विशेष रूप से सफेद फूलों को आकर्षक रंगों में रंगकर उनकी सौंदर्य अपील और बाजार मूल्य को बढ़ाने का कार्य करती है।

GCP

GAJ CHANDRA POLYMERS PRIVATE LIMITED

JAIPUR, RAJASTHAN

SunproMaXX®

स्मार्ट किसान की पहली पसंद

UV STABILISED | 100% VERGIN MATERIAL | TRACTOR READY | LONG DURABILITY | HIGH CROP YEILD | WEED CONTROL | NO SOIL EROSION | SAVE WATER

मल्च फिल्म

25 माइक्रॉन
30 माइक्रॉन
50 माइक्रॉन
100 माइक्रॉन
150 माइक्रॉन

ड्रिप पाइप

एचडीपीई पाइप

पीवीसी पाइप

हमारे यहां कृषि से संबंधित सभी प्रकार के उपकरण मिलते हैं।

पॉन्ड लाइनर

300 माइक्रॉन
500 माइक्रॉन
1000 माइक्रॉन
1500 माइक्रॉन
2000 माइक्रॉन
3000 माइक्रॉन

स्प्रिंकलर सिस्टम

1200mm त्रिशूल
1500mm त्रिशूल
मिनी स्प्रिंकलर सेट

सब्सिडी मंजूर

संपर्क करें

+91 - 7230080250 Abhishek Sharma
+91 - 6375902900 Dhruve Sharma
gajchandrapolymers@gmail.com

रजि. नं. : RAJHIN/2021/81869 पंजीयक समाचार पत्र भारत सरकार पोस्टल पंजीकृत संख्या कोटा/323/2023–25

IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives

IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives

दमदार जोड़ी

इफको नैनो डीएपी + इफको नैनो यूरिया प्लस

का वादा

लागत कम और लाभ ज्यादा

500 मिली बोतल मात्र ₹ 600/- में

500 मिली बोतल मात्र ₹ 225/- में

बीज उपचार : 5 मिलीलीटर प्रति किलोग्राम बीज

जड़ उपचार : 5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर करें

स्प्रे : खड़ी फसल में बुवाई के 35-40 दिन बाद 2-4 मिलीलीटर मात्रा प्रति लीटर पानी मे घोलकर पत्तियों पर छिड़काव करें।

स्प्रे : 2-4 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल कर प्रति छिड़काव 500 मिलीलीटर मात्रा का दो बार 35-40 दिन पर दूसरा 55-60 दिन पर छिड़काव करें।

इंडियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड, राजस्थान

राज्य कार्यालय : नेहरू सहकार भवन, तृतीय तल, भवानी सिंह रोड़, जयपुर (राज.) - 302001

स्वामी प्रकाशक : डॉ. प्रताप सिंह, निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Website : https://aukota.org
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com
दूरभाष : **0744- 2326727**

पुस्त प्रेष्य _____

स्वामी निदेशक प्रसार शिक्षा, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा प्रकाशक डॉ. प्रताप सिंह, मुद्रक श्री जमील अहमद, मैसर्स डायमण्ड प्रिन्टर्स, शॉप नं. 2, काली मस्जिद के पास, नई धानमण्डी, कोटा से मुद्रित एवं निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, बोरखेड़ा, कोटा, राज. से प्रकाशित, प्रधान संपादक डॉ.प्रताप सिंह